Nagari Pracharini Granthmala Series No. 16

पद्माकर कृत

हिम्मतबहादुर विरदावली ।

भगवानदीन सम्पादित

और

काशी नागरीप्रचारिणी सभा

द्वारा प्रकाशित ।

1908.

TARA PRINTING WORKS, BENARES.
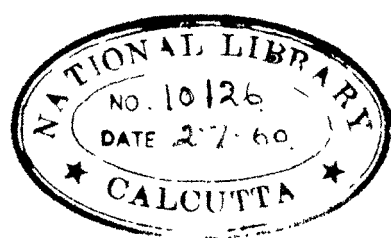
भूमिका।

यह 'हिम्मतबहादुर विरदावली' नामक ग्रंथ वीर रसमय काव्य का एक अनूठा ग्रंथ है। इसके रचयिता प्रख्यात कवि 'पद्माकर' हैं। पद्माकर को लोग केवल शृंगाररस का कवि कहा करते हैं। इसका कारण यही है कि पद्माकर कृत शृंगाररस की कविता के ग्रन्थ छप चुके हैं और लोगों ने उन्हीं को पढ़ा है। बहुत कम ऐसे लोग होंगे जिन्होंने पद्माकर कृत वीररस की कविता भी देखी हो।

हमको यह ग्रंथ पद्माकर के वंशधर पं० कृष्णकिशोर उपनाम 'कृपाकर' से मिला है अतएव हम उनको धन्यवाद देते हैं। सुनते हैं कि पद्माकर कृत 'सवाई जयसिंह विरदावली' नामक एक और वीररसमय काव्य ग्रंथ दतिया निवासी पद्माकर के वंशधरों के पास है। यदि मिल जायगा तो उसे भी किसी समय पाठकों को भेंट करेंगे। इस ग्रंथ की जो प्रति हमें मिली थी उसमें दो चार छंदों के एक एक चरण नहीं थे। उन्हें हमने अपनी बुद्धि के अनुसार पूर्ण कर दिया है। जहां ऐसा किया गया है वहां हमने फुट नोट में लिख दिया है। अपनी समझ के अनुसार जहां तहां हमने कुछ शब्दों पर टिप्पणियां भी लिखी हैं जिससे पाठकों को अर्थ समझने में दिक्कत न हो। क्योंकि अन्य प्रान्त निवासी उन शब्दों का अर्थ सरलता से न अनुमान कर सकते।

पद्माकर, हिम्मत बहादुर, तथा अर्जुनसिंह के संक्षिप्त जीवन चरित भी जैसे हमको ज्ञात थे लिख दिए गए हैं। अपनी शक्ति भर हमने इस पुस्तक को सरल तथा चित्ताकर्षक बनाने में कोई त्रुटि नहीं की। आशा है कि विज्ञ पाठकजन हमारी इस साहित्य सेवा को स्वीकार करके हमारा उत्साह बढावेंगे। विज्ञेषु किमधिकम॥

विनीत

भगवान दीन

पद्माकर का जीवनचरित ।

———:o:———

इनका असल नाम 'प्यारे लाल' था। 'पद्माकर' उपनाम था। ये 'भट्ट' उपाधिधारी तैलंग ब्राह्मण सागर निवासी मोहन लाल के पुत्र थे। इनका जन्म संवत् १८१० वैक्रमीय में 'सागर' में हुआ इसीसे इन्होंने अपना उपनाम 'पद्माकर' रक्खा था। सागर और पद्माकर शब्द एकार्थ वाचक हैं। यह बात पद्माकर जी की विलक्षण 'जन्म-भूमि भक्ति' की परिचायक है।

इनका पूर्ण चरित्र लिखने से पहिले इनके वंश का परिचय लिख देना हम आधिक उचित समझते हैं।

इनके कोई पूर्व पुरुष 'मधुकर भट्ट' मूंगीपट्टन, मधुपुरी, रंग-पट्टन और कालेश्वरादि स्थानों से साढ़े सात सौ दाक्षिणात्य लोगों को साथ लेकर संवत् १६१५ में नर्मदा तीरस्थ गढापत्तन राज्य में दुर्गावती रानी के समय में आए जैसा कि निम्न लिखित श्लोक से ज्ञात होता है। यह श्लोक हमें पद्माकर के एक वंशधर ही से मिला है।

श्लोक ॥

वर्षे बाण रसारसेन्दु मिलिते श्रीमद्गढापत्तने
रम्ये नार्मदकोटितीर्थकलिते दुर्गावतीपालिते।
मूंगीपट्टनतोऽथवा मधुपुरी श्रीरङ्गकालेश्वरात्
संयाताः किल दाक्षिणात्य विबुधाः सार्द्ध शतं सप्त च ॥

कालान्तर में इन सब दाक्षिणात्य पण्डित प्रवरों ने राजपूताने, अन्तरवेद, भदावर और बुन्देलखण्ड के अनेक स्थानों में निवास करना आरम्भ किया और स्वयं मधुकर भट्ट अपने कुछ आत्मीय सम्बन्धियों समेत वृज में आ बसे। कुछ लोग मथुरा में बसे कुछ गोकुल में। इसी कारण यहां से इस वंश की दो शाखाएँ हो गईं। मथुरा निवासी माथुर कहलाए और गोकुल निवासी गोकुलस्थ के नाम से प्रख्यात हुए। पद्माकर के पूर्वज माथुर शाखा के थे।

फिर इनके एक पूर्वज बांदे में आ बसे। इस कारण बांदानिवासी कहलाए। पर हमें पूर्ण अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि जिस समय पद्माकर का जन्म हुआ उस समय पद्माकर के पिता मोहन भट्ट मध्य प्रदेशान्तरगत 'सागर' (बड़ा सागर) में रहते थे और वहीं पद्माकर का जन्म हुआ। पद्माकर के पिता अच्छे संस्कृतज्ञ पण्डित और हिन्दी भाषा के कवि थे। पद्माकर के पिता मोहन भट्ट बांदे में पैदा हुए थे। पर मंत्रशास्त्र में निपुण होने के कारण उस समय के सागर नरेश रघुनाथराव (अप्पा साहेब) ने इनको आदरपूर्वक अपना मोसाहिब बना लिया था और वहीं (सागर में) बसा लिया था। मोहन भट्ट ने अपनी विद्या के बल से पन्ना और जयपुर में भी अपनी रसाई पैदा करली थी और इन राज्यों में उनका बड़ा मान था और यहां के राजा मोहन भट्ट को केवल कवि ही नहीं वरन मंत्रशास्त्री, मुसाहिब, सहायक तथा कुलगुरू की दृष्टि से देखते थे। इसी कारण सागर, पन्ना, तथा जयपुर के रनवासों में मोहन भट्ट के पुत्र पद्माकर का कुछ परदा नहीं था।

कहते हैं १६ वर्ष की अवस्था में ही पद्माकर कुछ कविता करने लगे थे और पहिला कवित्त जो उन्होंने रघुनाथराव को सुनाया था वह यह है।

कवित्त।

सम्पति सुमेर की कुवेर की जो पावै ताहि, तुरत लुटावत विलम्ब उर धारै ना। कहै पद्माकर सुहेम हय हस्तिन के, हलके हजारन को बितर बिचारै ना। गजगंज बकस महीप रघुनाथराव, याहि गज धोखे कहूं काहू देय डारै ना। याही डर गिरिजा गजानन को गोय रही, गिरितें गरेतें निज गोद तें उतारै ना।

इस छोटी ही अवस्था में पद्माकर की यह प्रतिभा देख रघुनाथराव बहुत प्रसन्न हुए और उसी समय पद्माकर को एक लक्ष मुद्रा और साज सामान सहित एक हाथी और एक घोड़ा उन्होंने पुरस्कार में दिया। कहते हैं पद्माकर जी घोड़े की सवारी तथा युद्ध विद्या में भी निपुण थे।

एक समय हमने पद्माकर वंशीय 'प्रभाकर' कवि से (जो दतिया में रहा करते थे और कभी कभी हमारे निवासस्थान 'छत्रपुर'

में भी आया करते थे) यह बात पूछी थी कि क्यों कवि जी आप हैं तो उसी वंश के और विद्वान भी हैं पर अब आप लोगों की कविता पद्माकर की कविता के समान रसीली क्यों नहीं होती। इस का उत्तर जो उन्होंने दिया था उसे हम उन्हीं के शब्दों में लिखे देते हैं। "भाइ जी. इसका कारण यह है कि जो कुछ हम लोग कहते हैं वह अनुमान से कहते हैं और जो कुछ 'प्यारे बब्बा'* कहते थे वह आंख देखी बात होती थी। रघुनाथराव तथा पन्ना और जयपुर के रनवासों में उनका परदा न था। वे सब ही उत्सवों पर तथा त्यौहारों में रानियों को पूर्ण शृङ्गार किए हुए अपनी आंखों देखते थे, हमलोग केवल अनुमान की आंखों से देखते हैं। फिर वैसी रसभरी कविता हम लोग कैसे कर सकते हैं। " उदाहरण स्वरूप उन्होंने यह भी बतलाया था कि एक समय रघुनाथराव की रानी ने सावन के महीने में विन्दुदार मेंहदी लगाई थी और वैसे ही हाथ पर मुहं रक्खे हुए वे सहज सुभाव लेटी थीं। उसी दशा में लेटे हुए देखकर पदमाकर को यह उक्ति सूझी थी जो निम्नलिखित सवैया में उन्होंने कही है।

केरनिरङ्ग थकी थिर ह्वै पलका पर प्यारी परी सुखपाय कै।
त्यों पदमाकर स्वेद के बुन्द रहे मुकुताहल से तन छाय कै॥
बिन्दु रचे मेंहदी के लसे कर तापर यों रह्यो आनन आय कै।
इन्दु मनो अरविन्द पै राजत इन्द्रबधून के वृन्द बिछाय कै॥

इसी प्रकार इस निम्न लिखित सवैया की उक्ति पद्माकर पर स्वयं बीती हुई बात है।

फाग के भीर अभीर फिरैं सु गुबिन्दहि लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मनकी पदमाकर ऊपर नाय अबीर की झोरी॥
छीनि पितम्बर कम्मर तें सु बिदा करी मीड कपोलन रोरी।
नैन नचाय कही मुसुकाय लला फिरि आइहौ खेलन होरी॥

---

* यह बात हमें उन्हींसे मालूम हुई थी कि पद्माकर का असली नाम 'प्यारेलाल' था।

तात्पर्य्य इस वार्त्ता का यह है कि पद्माकर की इस स्वच्छन्दता ही ने पद्माकर को अपने समय का सर्व श्रेष्ठ शृंगाररस का कवि बना दिया था।

कहते हैं कि कुछ ही दिनों में रघुनाथराव से इनसे कुछ कारण वश कुछ अनबन होगई और पद्माकर बांदे को चले आए । बांदे आने के समय तक पद्माकर प्रसिद्ध नहीं हुए थे। बांदा निवासी प्रसिद्ध मंत्रशास्त्री मोहन भट्ट का सुविज्ञ पुत्र जान तथा स्वयं मंत्र-शास्त्र में निपुण देख सर्व प्रथम सुँगरा निवासी 'नोने अर्जुनसिंह' ने इनको अपना दीक्षा गुरु बनाया और चंडी अनुष्ठान द्वारा तरवार सिद्ध कराई। बस यही इनकी ख्याति की प्रथम सीढ़ी थी।

पर कारण ज्ञात नहीं होता कि अर्जुनसिंह की कीर्ति छोड़ कर इन्होंने हिम्मत बहादुर की कीर्ति पर क्यों अधिक ध्यान दिया। बांदे में रहने ही के समय पद्माकर ने यह पुस्तक हिम्मत बहादुर विरदावली रची थी पर रचना काल पद्माकर ने अपने किसी ग्रन्थ में नहीं दिया है।

एक समय इसी हिम्मत बहादुर के दरबार में पद्माकर जी और ठाकुर कवि दोनों मौजूद थे। उसमय छेड़ छाड़ की इच्छा से हिम्मत बहादुर ने पद्माकर से पूछा कि कहिए कविजी लाला ठाकुर दास की कविता कैसी होती है। पद्माकर ने कहा गोसाईंजी लाला-साहेब की कविता तो बहुत अच्छी और रसीली होती है पर लाला-साहेब के शब्द हलके से होते हैं (भाव यह कि कविता में गंभीरता नहीं है)। ठाकुर ने तत्कालही उत्तर दिया कि हां कविजी ठीक है। हलके शब्द होने के कारण ही तो हमारी कविता उड़ी उड़ी फिरती है (चारों ओर प्रसिद्ध है) और आपके भारी शब्द होने के कारण ही आपकी कविता उड़ नहीं सकती (अर्थात् अभी तक दूर दूर तुम्हारी ख्याति नहीं हुई है) यह सुन पद्माकर से कुछ जवाब नहीं देते बना, वे चुप रह गए।

इसके अनन्तर संवत् १८५६ में रघुनाथराव ने इनका मान मनाकर फिर इन्हें बुला भेजा और चूंकि इस बीच में मोहन कवि (पद्माकर के पिता) का देहान्त हो चुका था, रघुनाथराव ने पद्मा-कर जी को पिता के स्थान में इन्हें अपना मुसाहब बनाया। उस

समय मरहट्टों का दौर दौरा था और बहुधा मरहट्टे ही विजयी रहते थे। रघुनाथराव ने भी कई एक लड़ाइयां जीती थीं। पद्माकर ने उनकी तलवार की तारीफ में जो कविता की थी उसका एक कवित्त हम आप की नजर करते हैं।

कवित्त।

दाहन तैं दूनी तेज तिगुनी त्रिशूलन तैं
चिल्लिन तें चौगुनी चलांक चक्र चाली तैं।
कहै पदमाकर महीप रघुनाथराव ऐसी
समसेर शेर शत्रुन पै घाली तैं॥
पांचगुनी पव्वतैं पचीस गुनी पावक तैं
प्रगट पचास गुनी प्रलय प्रनाली तैं।
साठ गुनी सेस तें सहस्त्र गुनी स्रापन तैं
लाख गुनी लूक तैं करोर गुनी काली तैं॥

कुछ कालोपरान्त वे रघुनाथ राव से फिर रूठ गए और ग्वालियर चले गए। फिर सागर कभी नहीं गए। ग्वालियर में उस समय दौलत राव सींधिया गद्दी पर थे। दौलत राव बड़े गुणग्राही थे। उन्होंने पद्माकर का अच्छा आदर किया। सागर वाले रघुनाथ राव के यहां जो कुछ पद्माकर ने पाया था उससे दश गुना सींधिया ने केवल पहली भेंट में दिया। उस समय पद्माकर ने यह कवित्त कहा था॥

कवित्त।

छीनगढ बंबई सुमन्द कर मन्दरास
वन्दर को बन्द कर बन्दर बसावैगो।
कहै पदमाकर कटाकै काशमीर हू को
पिंजर सों घेर कै कलिंजर छोड़ावैगो॥
बांका नृप दौलत अलीजा महाराज कबौं
साजि दल दपटि फिरंगिन को बावैगो।
दिल्लीदरपट्ट पटनाहू को झपट्ट करि
कबहुं कै लत्ता कलकत्ता के उड़ावैगो॥

ग्वालियर में रह कर दौलतराय सींधिया के नाम से 'आली जाह प्रकाश' नामक ग्रंथ उन्होंने बनाया। और उसी दरबार के मुख्य

मुसाहेब 'ऊदाजी' के आज्ञानुसार संस्कृत हितोपदेश का गद्यमय भाषानुवाद किया । 'आलीजाह प्रकाश' ग्रंथ तो हमने नहीं देखा पर हितोपदेश का भाषानुवाद हमने देखा है, उसमें ऊदा का परिचय यों दिया है ।

श्री खंडो जी राव को सुत रानो जी राव ।
ता सुत ऊदा जी उदित जाको परम प्रभाव ॥
ऊदा जी तांत्या प्रबल शुभमति गुण गंभीर ।
नृपमणि दौलत राव को मुख्य मुसाहेब बीर ॥
ऊदा जी के नेह सों पद्माकर सुख पाय ।
राजनीति की बचनिका यों भाषत चितलाय ॥

ग्वालियर ही में जयपुर नरेश का बुलौवा पाकर संवत् १८५८ में वे जयपुर गए । उस समय वहां प्रतापसिंह जी राजा थे । प्रतापसिंह ने इनका बड़ा आदर किया और चूंकि महाराजा प्रतापसिंह स्वयं कवि थे इस कारण पद्माकर की योग्यता को उन्होंने भली भांति जान लिया । और इनको अपनी सरकार में राज्य कवि की भांति नौकर रख लिया। वे इनसे इतना सनेह रखते थे कि इनको हरदम अपने साथ ही रखते थे। इन महाराज की प्रशंसा मे पद्माकर ने जो कविता की है वह बड़ी ओजगुणमय है । उसमें से दो एक सुनिए ।

कवित्त ।

ज्वाला तें जहर ते फनिन्द फूतकारन तें
बाडव की बाडहू तें विषम घनेरो है ।
कहै पद्माकर प्रतापसिंह महाराज
ऐसो कछू गालिब गुनाहिन पै हेरो है ॥
चक्र हू तें चिलिन तें प्रलै की बिजुलिन तें
जमयुत्थ जिलिन तें जगत उजेरो है ।
काल तें कराल त्यों कहर काल काल हू तें
गाज तें गजब्ब त्यों अजब्ब कोप तेरो है ॥
कहर को कोश किधौं कालिका को कोलाहल
हलाहल को हौद बहरात लबालब को ।

कहै पद्माकर प्रतापसिंह महाराज तेरो
कोप देखि यों दुनी में को न दबको ॥
चिल्लिन को चाचा औ बिल्लुलिन को बाप बड़ो
बांकुरो बबाहै बड़वानल अजबको।
गब्बिन को गंजन गुभैल गुरू गोलन को
गंजन को गंज गोल गुम्बज गजब को ॥

यदि ये महाराज अधिक जीते तो न मालूम पद्माकर को क्या कर देते, पर हा ! कुचाली काल ने इनको संवत् १८६० ही में उठा लिया। पद्माकर निराश हो अपने वतन बांदे को वापस आने को तैयार हुए पर मृत महाराज के सुयोग्य पुत्र महाराज जगत सिंह ने इन्हें नहीं आने दिया और बाप से बढ़ कर इनका मान सम्मान किया। राजगद्दी के उत्सव पर जो कविता पद्माकर ने सुनाई उस के पुरस्कार में जगत सिंह ने उन्हें भरपूर इनाम दिया और कृपा कर के कोई ग्रंथ रचने की आज्ञा दी जिस पर पद्माकर ने "जगद्विनोद' नामक ग्रंथ बनाया। ग्रंथ को सुन कर जगतसिंह महाराज ने १२ हाथी, १२ गांव, और १२ लक्ष मुद्रा इनाम दिया। इस 'जगद्विनोद' नामक ग्रंथ में जो कविता है उसमें से बहुत सी ऐसी है जिसे पद्माकर ने उस समय बनाया था जब वे सागर में रघुनाथ राव के यहां थे।

एकै संग धाये नन्दलाल औ गुलाल दोऊ
दृगन गये जो भरि आनँद मढ़े नहीं।
धोय धोय हारी पद्माकर तिहारी सौंह
अब तो उपाय एकौ चित्त पै चढ़ै नहीं ॥
कैसी करौं कहां जाउं कासों कहौं कौन सुनै
कोऊ तो निकासौ जासों दरद बढ़ै नहीं।
एरी मेरी वीर जैसे तैसे इन आंखिन तें
काढ़िगो अबीर पै अहीर को कढ़ै नहीं ॥

यह उपरोक्त कवित्त 'जगद्विनोद' का है। पर हमने विश्वसनीय पुरुषों से इस कवित्त के विषय में यों सुना है कि एक समय रघुनाथ राव के यहां कवियों का जमाव था। कविलोग अपनी अपनी प्रतिभा दिखला रहे थे। पद्माकर ने भी यह कवित्त कह के सब से

प्रश्न किया कि इस कवित्त की नायका का निरूपण करो कि कौन नायका है। कोई कुछ कोई कुछ कहने लगा। उस सभा में पदूमाकर के एक साले भी मौजूद थे। उनको जो दिल्लगी सूझी उससे पदूमाकर जी को भरी सभा में बहुत लज्जित होना पड़ा। उन्होंने कहा "सुनिए साहबो! इस कवित्त की नायका पदूमाकर की बहिन है। क्योंकि वह "पदमाकर तिहारी सौंह" और 'वीर' शब्द प्रयोग करती है। इससे साफ जाहिर है कि वह अपने भाई पद्माकर की कसम खाती है।" सभा में बड़ी हँसी हुई और सबों ने उनकी तर्कना शक्ति की प्रशंसा की। पद्माकर जी ऐसे लज्जित से हुए कि उनसे कुछ कहते न बना। कहते हैं पद्माकर ने उस समय यह प्रतिज्ञा की कि अब हम कभी किसी छन्द में इस भांति 'वीर' शब्द का प्रयोग न करेंगे। पाहिले जो हम दो सवैए लिख आए हैं वे भी 'जगद्विनोद' में पाए जाते हैं। पर वे उसी समय के कहे हुए हैं जब वे सागर में थे। इस बात को स्वयं उनके एक वंशधर ही ने हम से कहा था।

हमारा अनुमान है कि पद्माकर ने 'पद्माभरण' और 'सवाई जयसिंह विरदावली' नामक ग्रन्थ भी उसी समय बनाए जब वे जयपुर में थे। ऐसा भी ज्ञात हुआ है कि संवत् १८७० के लगभग पद्माकर जी जोधपुर भी गए थे पर वहां ठहरे नहीं। तदनन्तर एक समय महाराणा भीमसिंह जी के समय में पदूमाकर जी उदयपुर भी गए थे। उक्त महाराणा साहब ने उनका अच्छा आदर किया था। वहां के गनगौर मेले पर जो कविता पदूमाकर ने बनाई थी उसमें के दो एक छन्द ये हैं।

कवित्त।

द्यौस गनगौर के सुगिरिजा गुसाइन की
  छाई उदयपूर में बधाई ठौर ठौर है।
देखो भीम राना या तमासो ताकिवे के लिये
  माची आसमान में विमानन की भौर है।
कहै पदमाकर त्यों धोखे में उमा के गज-
  गौनिन की गोद में गजानन की दौर है।

पारावार हेला महा मेला में महेश पूछें
गौरन में कौन सी हमारी गनगौर है ।

सवैया ।

बांसुरी है लागौं मोहन के मुखमाल है कंठ तजौं नहिं फेरी ।
त्यौं पद्माकर है लकुटी रहौं कान्हर के कर घूमि घनेरी ।
पीत पटी है कटी लपटौं घट तें न घटै चित चाह जु मेरी ।
दे वरदान यहै हमको सुनिये गनगौर गुसाइन मेरी ॥ १ ॥
वा बनबाग की मालिनि है पहिरावहुं माल विसाल घनेरी ।
त्यौं पद्माकर पान खवावहुं खासी खवासिन है मुखहेरी ।
श्री नँदनन्द गुविन्द गुनाकर के घरकी कहवावहुँ चेरी ।
दे वरदान यहै हमको सुनिये गनगौर गुसाइन मेरी ॥ २ ॥

जयपुर में रहते समय ही में पद्माकर के शरीर में कुष्ट रोग के कुछ चिह्न प्रगट हुए। महाराज से छुट्टी लेकर बूंदी होते हुए संवत् १८८० के लगभग वे बांदे आए। यहां कुष्टरोग बढ़ चला। जब दवा दर्पन से कुछ लाभ न हुआ तब अन्त में पद्माकर ने श्री राम चन्द्रजी की शरण ली, अर्थात् श्रीवाल्मीकीय रामायण का पद्यमय भाषा अनुवाद करना उन्होंने आरम्भ किया। ज्यों ज्यों यह 'राम-रसायन' नामक ग्रंथ बन बन कर तैयार हो चला त्यों त्यों कुष्टरोग भी अच्छा हो चला। ५ वर्ष में यह ग्रंथ पूरा हुआ। इसको पूर्ण करके प्रबोधपचासा ग्रंथ इन्होंने रचा। इतने समय में कुष्टरोग अच्छा भी हो गया। कुछ कुछ जहां तहां उसके चिह्न से रह गए। इतने ही में संवत १८८३ में महाराज रतनसिंह जी चरखारी की गद्दी पर विराज चुके थे। इन्हीं महाराज से मिलने के लिये पद्माकर चरखारी गए। पर महाराज ने कवि जी से मिलने से इंकार कर दिया (यद्यपि उस समय इनका कुष्ट रोग अच्छा हो गया था) इस बात से कवि जी को बहुत ग्लानि हुई। कहते हैं कि फिर पद्माकर बांदे को न लौट कर चरखारी ही से गंगा सेवन के निमित्त सीधे कानपुर को चले जहां प्रथम ही से पद्माकर की कोठी चलती थी (यह कोठी कानपुर में गंगा किनारे अब भी मौजूद है)। रास्ते में चलते ही चलते 'गंगालहरी' नामक ग्रंथ इन्होंने बना डाला। कोई कोई कहते हैं

कि यह ग्रंथ कानपुर में रह कर बनाया। पर यह बात ठीक नहीं। स्वयं 'गंगालहरी' की कविता से यह बात भली भांति ज्ञात होती है कि यह कविता सफर में चलते चलते बनाई गई है।

सुनिए, पद्माकर जी अपने पाप से कहते हैं।

कवित्त।

जैसे तैं न मोकों कहूं नेकहूं डरात हुतो ऐसै अब तोसों हौंहु नेकहू न डरिहौं। कहै पदमाकर प्रचंड जो परैगो तो उमंडि कर तोसों भुजदंड ठोंकि लरिहौं। चलो चलु चलो चलु विचलु न वीचही ते कीच वीच नीच तो कुटुम्ब को कचरिहौं। ऐरे दगादार मेरे पातक अपार तोहिं गंगा की कछार में पछार छार करिहौं॥ १॥ जोग जप जागे छांड़ु जाहु न परागे भैया मेरी कही आंखिन के आगे सुतो आवैगी। कहै पदमाकर न ऐहै काम सरस्वती सांचहू कलिन्दी काम करन न पावैगी। लैहै छीन अम्बर दिगम्बर के जोरावरी बैल पै चढाय फेरि शैल पै चढावैगी। मुंडन के माल की भुजंगन के जाल की सु गंगा गजखाल की खिलत पहिरावैगी॥ २॥

कहते हैं ६ मास गंगा सेवन करने से पद्माकर जी रोग से बिल्कुल मुक्त हो गए थे। पर फिर लौट कर बांदे नहीं आए, कानपुरही में रहे और पूर्ण रीति से रोगमुक्ति होने पर भी ६ मास और जीते रहे। संवत् १८९० में वहीं गंगा किनारे कानपुर म उनका देहान्त हुआ।

जिस सिलसिले से हमको पद्माकर का हाल अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है उसी सिलसिले से हमने लिखा है। इससे मालूम होता है कि यह ग्रंथ (हिम्मत बहादुर विरदावली) उनका सर्व प्रथम ग्रथ है और गंगालहरी सब से अन्तिम ग्रंथ है।

(फुटकर बातें)

कहते हैं कि पद्माकर जी को तारा देवी का इष्ट था। इसी कारण इनकी वाणी मे जोर था। इन्होंने कभी किसी सभा वा समाज में पराजय नहीं पाई। हमेशा शास्त्रार्थ में विजय लाभ करते रहे। केवल दो जगह इनसे जवाब नहीं देते बना अर्थात एक तो

अपने साले की तर्क का दूसरे ठाकुर कवि की बात का (जैसा कि हम ऊपर लिख आए हैं)।

हमारा भी अनुमान ऐसा ही है कि "हिम्मत बहादुर विरदावली" ही इनका सर्व प्रथम ग्रन्थ है, क्योंकि इस ग्रंथ की रचना के समय कवि जी परिपक्व युवा रहे होंगे और कविता तथा युद्ध विद्या में निपुण होने के कारण इस ग्रंथ में पद्माकर ने 'वीर-रस' का ऐसा पूर्ण रूप दिखाया है कि मानो वीर रस की मूर्त्ति खड़ी कर दी है। भाव, अनुभाव, संचारी और स्थायी इत्यादि का ऐसा समयोचित प्रयोग किया है कि विचारते ही बनता है। काव्यतत्त्व ज्ञाता ही कवि की प्रतिभा तथा परिश्रम की दाद दे सकते हैं। इसी वीररसमय काव्य में भी कहीं कहीं कवि ने युवावस्था की उमङ्गों से रसिकता का पुट दिया है जिसे विचारवान पाठक स्वयं समझ लेंगे।

कहते हैं कि पद्माकर ने अपनी काव्यशक्ति के प्रभाव से ५६ लाख रु० नकद, ५६ गांव, और ५६ हाथी इनाम में पाए थे। उन गांवों की सनदों में से कई एक सनदें और स्वयं गांव अभी तक उनके वंशधरों के कब्जे में हैं। अजयगढ़ रियासत से मिली हुई एक गांव की सनद स्वयं हमने उनके एक वंशधर के पास देखी है। हमने उसकी नकल लेनी चाही पर उन्होंने नकल देने से इंकार किया।

पद्माकर का वंशवृक्ष और उसी वंशवृत्त विषयक कविता जो हमें उन्हींके एक वंशधर से मिली है ज्यों की त्यों हम नीचे देते हैं।

(पद्माकर के वंशवृत्त विषयक कविता)

:o:

छप्पय।

मधुकर मधुकर सरिस सकल विद्यारस नायक।
वेद शास्त्र पौराण वैद्य ज्यौतिष गुण गायक॥
मीमांसिक मत कर्मकाण्ड कर्त्ता यज्ञादिक।
दान धर्म मतिवन्त राज राजेन्द्र प्रमाणिक॥

पूजित सकल नरेन्द्र कुल दाक्षिणात्य तैलङ्गद्विज ।
आत्रेय गोत्र पञ्चद्रविड मथुरा स्थिति हित गमन वृज ॥

दोहा ।

संवत् चन्द्रकला शतक तिथि बढ़ि विक्रम जान । (सं० १६१५)
कियो वास तट नर्मदा दुर्गावती निधान ॥
तिनके सुत भे तत्सदृश गङ्गाजल अभिराम ।
नामधेय विख्यात महि मण्डल गङ्गाराम ॥

मनहरण ।

तिनके सुवन भये मोहन महत मति तासु सुत श्रीमत श्रीगोविंद सुनामा हैं । तिनके सुवन शुभ प्रगटे जनारदन देव द्विज सेवी गुणनिधि सिधि कामा हैं ॥ मोहन सुलाल भये तिनके अनूप सुत सागर निवासी सुखरासी गुणधामा हैं । तिनके सुवन महिमण्डल बुन्देलखण्ड मंडन सभा के देश देश ग्रेह ग्रामा हैं ॥

दोहा ।

पद्माकर पद्मानिलय काव्य कला कुशलेश ।
तिनके सुत हैं विमलमति मिहीलाल राकेश ॥
अम्बा अम्बुजरूपमय पाय राज्य सनमान ।
जयपुर दतिया नगर पुनि बांदा वास निधान ॥

यह कविता और यह वंशवृक्ष हमको कृष्णकिशोर उपनाम कृपाकर से मिले थे । यह कृपाकर जी कुछ दिनों छत्रपुर में नौकर रहे थे और उनका पुत्र दामोदर उर्दू और अँग्रेज़ी पढ़ने के लिये हमारे पास आया करता था । कृपाकर कहते थे कि यह कविता उनके पिता विद्याधर की बनाई हुई है ।

पद्माकर का वंशवृत्त (जैसा हमको मिला है)
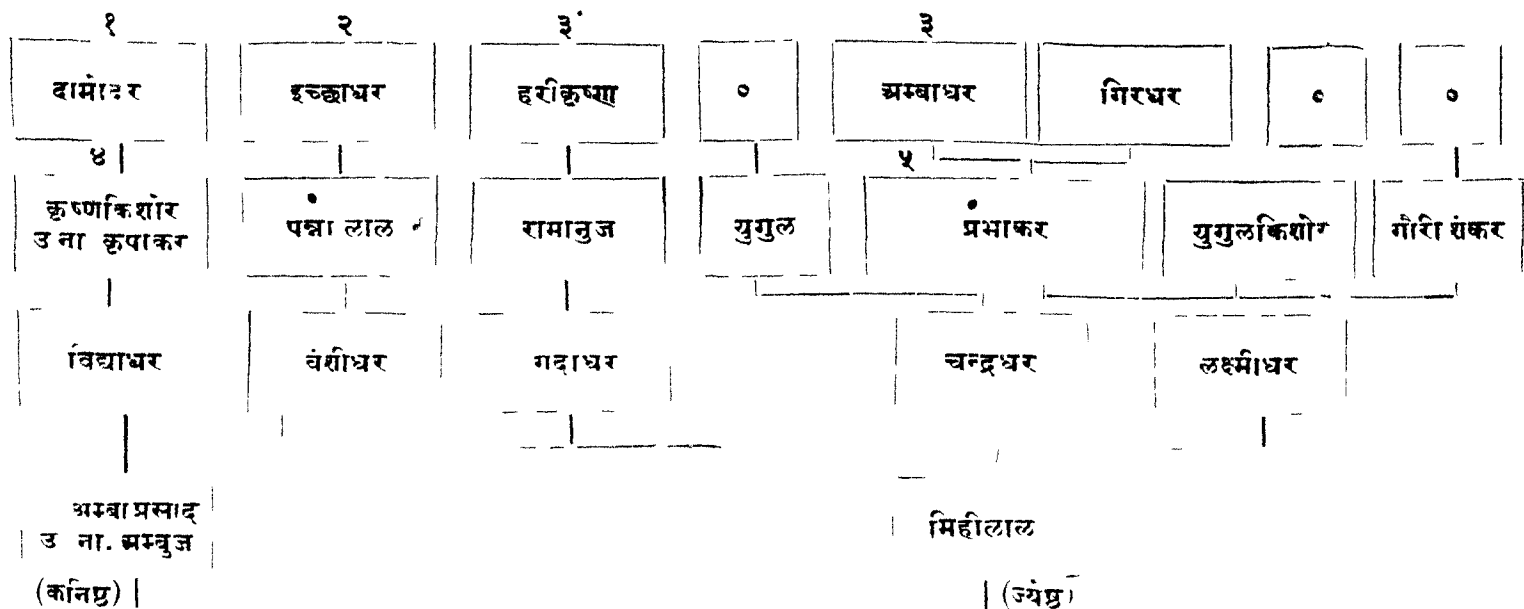
१ यह लड़का कुछ दिन तक हमसे उर्दू पढ़ता रहा है। सं० १९६१ में इसकी उम्र लगभग १० वर्ष की थी।

२ ये महाशय जयपुर में रहते हैं।

३ ये महाशय दतिया में रहते हैं।

४ ये महाशय कुछ दिन हुए छत्रपुर में रहे थे। इन्हींसे हमें यह वंशवृक्ष और कविता मिली।

५ इन्हीं 'प्रभाकर' से हमने उपरोक्त बातें पूछी थीं जिनका उल्लेख हमने पद्माकर के जीवनचरित में किया है। ये कभी कभी छत्रपुर आया करते थे।

६ सं. १६१५ में तैलंगदेश से मध्यदेश में आए और वहां से चलकर मथुरा में स्थित हुए।

हिम्मतबहादुर का संक्षिप्तजीवनचरित।

:o:

ये कुलपहाड़ के एक सनाढ्य ब्राह्मण के लड़के थे। पिता लड़कपन में परलोकवासी हुए। इनके एक जेठे भाई भी थे। माता इनका पालन पोषण न कर सकी, इस कारण राजेन्द्रगिरि नामक गोसाईं के हाथ इन्हें उसने बेच डाला। राजेन्द्रगिरि ने दोनों को अपना चेला बनाकर बड़े का नाम उमरावगिरि और छोटे का नाम अनूपगिरि रक्खा। बहुत छोटी ही अवस्था में यह घटना होने के कारण इनके असली पिता का नाम तथा इन दोनों भाइयों के असली नाम बहुत पूछ ताछ करने पर भी नहीं मिले। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात,' इस सिद्धान्त के अनुसार अनूपगिरि बहुधा गुरू की सेवा से छुट्टी पाने पर मिट्टी के सवार पियादे बनाता और बालक्रीडा में उन्हें लड़ाया करता, आप उनका सरदार बनता और उन पर हुक्म चलाता। कहते हैं अनूपगिरि एक दिन इस खेल में बहुत ही लीन हो रहे थे कि इतने ही में गुरू जी ने उन्हें किसी काम से पुकारा। वे खेल छोड़ कर गुरु के पास आए और गुरू की आज्ञा के अनुसार कुछ काम करने में लग गए। पर काम करते करते कभी कभी तिरछी दृष्टि से अपने (वही मिट्टी के) सवार पियादों की ओर देखते जाते थे पर गुरू के लिहाज से काम में लगे थे। गुरु ने उनकी मनोवृत्ति को समझ लिया और यह भी जांच लिया कि मेरी भक्ति भी इसके हृदय में बहुत है इससे यह मेरी आज्ञा को उलंघन नहीं करना चाहता। खुश होकर उन्होंने आशीर्वाद दिया कि "अबे 'अनूपा' अभी से अपना शौक मिट्टी के ऊपर क्यों खर्च किए डालता है अभी तो तुझे एक सच्ची फौज का सरदार होना है तब अपनी उत्सुकता पूरी कर लेना, अभी काम कर"।

अनूपगिरि इस आशीर्वाद को शिरोधार्य्य कर उसी दिन से खेल कूद छोड़ तनमन से गुरू की सेवा में लगे।

गुरु राजेन्द्रगिरि ने इनको होनहार समझ इनके लिये कसरत, कुश्ती, पटा, बनेठी, इत्यादि खेलने का बन्दोबस्त कर दिया

और १६ वर्ष की अवस्था को पहुंचते पहुंचते गोसाईं अनूपगिरि गुरु-कृपा से वास्तव में युद्धविद्या में निपुण हो गए. घुड़सवारी में निपुण हुए, दो भैंसों का दूध नित्य सवेरे धारोष्ण पीकर कलेवा करते। कहते हैं कि अनूपगिरि ऐसे रूपवान थे कि अनेक स्त्रियां इन पर मोहित होती थीं पर अनूपगिरि वास्तव में अनुपम लँगोटबंद थे। इनके बड़े भाई उमरावगिरि भी लगभग इन्हीं के समान गुणवान थे पर वीरत्व में अनूप की बराबरी न कर सकते थे।

जब इनकी अवस्था २८ वर्ष की हुई तो इनके गुरू राजेन्द्रगिरि भी कैलाशवासी हुए। अनूपगिरि अपने बड़े भाई तथा दश पांच अन्य चेलों और साथियों को लेकर लखनऊ की ओर सिधारे और वहां पहुंच नवाब शुजाउद्दौला की फौज में नौकर हुए। उक्त नवाब ने इनको अपने खास जिलौ में रक्खा। तदनन्तर कोई खास काम करने पर इन्हें 'हिम्मत बहादुर' की उपाधि दी और एक हज़ार सवारों का सरदार बनाया। गुरुवाक्य पूरा हुआ। संवत् १८२० में नवाब से और सरकार ईस्ट इंडिया कम्पनी से जब बकसर की लड़ाई हुई उस लड़ाई में हिम्मत बहादुर ने बड़ी वीरता दिखलाई और स्वयं अपनी जांघ में कड़ा घाव खाकर नवाब की जान बचाई थी। आखिर लड़ाई में नवाब हार गया और रणखेत से भाग निकला। उस भागाभागी में भी हिम्मत बहादुर ने नवाब को कई जगह बहुत अच्छी सहायता दी और उनकी सेवा की। इन सब बातों से खुश हो कर शुजाउद्दौला ने हिम्मत बहादुर को जिला कानपुर 'अन्तरगत' सिकन्दरे का परगना और जिला फतेहपुर अन्तरगत 'बिंदकी' का परगना जागीर में दिया। इस जागीर का नाम उस समय 'रजधान' था। इससे हिम्मत बहादुर स्वयं और उनके वंशज अब तक रजधानिया गोसाईं कहलाते हैं।

शुजाउद्दौला ने हिम्मत बहादुर और करामतखां की मातहती में कुछ फौज देकर बुंदेलखण्ड को फतह करने को भेजा। उस समय बांदे में महाराज गुमानसिंह राज्य करते थे। आज कल की रियासत अजयगढ़ उस समय के बांदा राज्य का केवल एक परगना थी। नोने अर्जुनसिंह पँवार इन्हीं गुमानसिंह के सेनापति थे। नवाब की फौज से गुमानसिंह ने तेंदवारी (जिला बांदा) के मुकाम पर

लड़ाई की और ऐसी शिकस्त दी कि हिम्मत बहादुर तथा करामत खां को भाग कर और जमुना पैर कर अपनी जान बचानी पड़ी। उधर तो नवाब ने शिकस्त खाकर कुछ दिन के लिये शान्ति धारण की, इधर बुन्देला राजाओं ने आपुस में लड़ना शुरू किया। बुन्देलखंड में फूट की बेल बढ़ी। नोने अर्जुनसिंह ने पन्नावाले सरनेतसिंह का पक्ष करके बेनी हुजूरी से लड़ने का ठान ठाना। इस लड़ाई के लिये ऐसी तैयारियां हुई कि लगभग सब ही बुंदेले सरदार किसी न किसी की ओर से इस लड़ाई मे शरीक हुए। इस लड़ाई को बुंदेलखंड का महाभारत कहना अत्युक्ति नहीं है। आखिरकार संवत् १८४० में गठौरा के रणक्षेत्र में भारी लड़ाई हुई (यह मौज़ा गठौरा छत्रपुर राजधानी से ३ मील पूर्व है)। इस लड़ाई में ऐसे ऐसे वीर क्षत्री काम आए कि मानो बुंदेलखंड वीर पुरुषों से खाली होगया। बेनी हुज़ुरी (जिनके वंशधर अब मैहर में राज्य करते हैं) इस लड़ाई में मारे गए अर्जुन सिंह ने विजय पाई।

यह मौका ताक कर हिम्मतबहादुर ने फिर चढ़ाई की। बुंदेलखंड में फूट फैली थी, वीर पुरुषों से एक भांति बुंदेलखंड खाली सा हो गया था। केवल अर्जुन सिंह और कुछ दस पांच उन्हीं के भाई भतीजे बचे थे। वे भी इनसे विरुद्ध थे। इस कारण हिम्मतबहादुर को मौका मिला। हिम्मतबहादुर ने बुंदेलखंड में आकर पहिले दतिया पर चढ़ाई की। वहां से चौथ वसूल की, मोठ का परगना दबा लिया और बांदे पर डांट लगाई। पर फौज कम थी इस कारण हिम्मत न पड़ी।

पूना वाले नाना फरनवीस का भेजा हुआ नवाब अलीबहादुर भी इन्हीं दिनों सिंधिया के लश्कर में इसी गरज से आया था कि सुअवसर ताक कर बुंदेलखंड पर कबजा करै। हिम्मतबहादुर ने नवाब अलीबहादुर को लिखा कि आप आइए मैं आपकी मदद करूंगा। आप बांदे के नवाब हूजिए मुझे सिर्फ इतना मुल्क दीजिएगा जिससे मैं अपनी सेना का भरण पोषण कर सकूं। उस समय हिम्मतबहादुर की फौज में २०००० सवार तथा पियादे थे। चिट्ठी पातेही लगभग इतनी ही फौज लेकर नवाब अलीबहादुर संवत् १८४७ में बुंदेलखंड में आ धमका।

इधर बांदे वाले राजा गुमान सिंह संवत १८३५ में देव लोक वासी हो चुके थे। उनके कोई लड़का न था। अपने एक निकट-स्थ संबंधी दुर्गासिंह के लड़के बखतसिंह को गोद लेकर नोने अर्जुनसिंह अपने बहादुर सेनापति के सिपुर्द कर गए थे। नोने अर्जुन सिंह ने हिम्मतबहादुर को एक दफा नीचा दिखाया था जैसा कि हम ऊपर लिख आए हैं। चरखारी के राजा खुमानसिंह से भी अनबन थी क्योंकि इनके भी कई एक गांव अर्जुन सिंह ने दबा लिए थे। इन दोनों शत्रुओं से अपने नाबालिग मालिक को बचाने के लिये नोने अर्जुन सिंह ने बांदा छोड़ अजयगढ़ के किले में रहना अख्तियार किया था।

अली बहादुर ने आतेही हिम्मतबहादुर की सहायता से बांदे पर कब्ज़ा किया और वह बांदे का नव्वाब कहलाया। हिम्मतबहादुर को अपना सेनापति मुकर्रर किया। राजा चरखारी भी नवाब से मिल गया। बस इन तीनों ने मिलकर अर्जुन सिंह पर चढ़ाई की। अज-यगढ़ और बनगांव के बीच वाले मैदान में लड़ाई हुई। कहते हैं कि इस समय कवि पद्माकर जी (अर्जुनसिंह के दीक्षागुरु होने पर भी) हिम्मत बहादुर के साथ थे और उन्होंने यह लड़ाई अपनी आंखों देखी थी। बस इसी लड़ाई का हाल इस पुस्तक में है जो आपके सामने मौजूद है। यह लड़ाई संवत १८४९ में हुई।

जैसा इस पुस्तक से जाहिर है नोने अर्जुनसिंह इस लड़ाई में मारे गए। पर एक बात इस में जनश्रुति से विरुद्ध पाई जाती है इस पुस्तक में पद्माकर जी अर्जुनसिंह का मारा जाना हिम्मतबहा-दुर के हाथ से लिखते हैं और बुंदेलखंड में सब जगह यह बात मशहूर है कि अर्जुनसिंह एक अपनेही वंशवाले वीर पुरुष के भाले से मारे गए। अर्जुनसिंह के कुछ भाई बिरादर चरखारी के राज्य में 'बंसिया' नामक गांव में रहते थे और राजा चरखारी की रिआया और नौकर थे। इस लड़ाई में राजा चरखारी की भी फौज हिम्मत बहादुर की मदद में थी। उसी फौज के एक वीर ने अर्जुनसिंह को भाला मारा जिस-से वे मरे। पद्माकर ने शायद इस कारण से ऐसा लिखा हो कि मुख्य नायक इस पुस्तक के हिम्मतबहादुर हैं, इसलिये उन्हींके हाथ से अर्जुनसिंह का मारा जाना ठीक होगा। खैर जो कुछ हो, अर्जुनसिंह

मारे गए, बखतसिंह जो कि अभी नाबालिग थे कैद कर लिए गए और गुमानसिंह के कुल राज्य पर अलीबहादुर का कबज़ा होगया।

इसके बाद नव्वाब अलीबहादुर ने हिम्मतबहादुर को साथ लेकर रीवां पर चढ़ाई की पर रीवां के राजा ने १२ लाख रुपया देकर सुलह करली। तदनन्तर नव्वाब ने कालिंजर का किला घेरा, पर उसे तीन साल तक घेरे रहने पर भी जीत न सका. वह इसी घेरे ही में था कि स्वयं उसे ही जमराज ने आघेरा। संवत् १८५६ में कालिंजर ही में उसका देहान्त होगया।•

नव्वाब अलीबहादुर का जेठा लड़का शमशेरबहादुर जो उस समय पेशवा की सेवा में पूना में था बाप की मृत्यु की खबर पाकर बुंदेलखंड को आया और उसने अपने मामूं को जो बजाय बाप के राज्य पर अधिकार ज़माना चाहता था कैद करके उसे जहर देकर मरवा डाला। अलीबहादुर ने अपने वादे के मुताबिक कुछ हिस्सा मुल्क का हिम्मतबहादुर को भी दे रक्खा था। शमशेरबहादुर ने वह भी लेना चाहा। बस हिम्मतबहादुर को भला यह कब गवारा हो सकता था वह फौरन बिगड़ खड़ा हुआ और उसने सरकार कम्पनी से मदद चाही, विजित मुल्क में से कुछ भाग अँगरेजों को देने का वादा किया। भला अँगरेज़ कब ऐसा मौका चूकने वाले थे। फौरन् हिम्मतबहादुर की मदद को आए और हिम्मतबहादुर की मदद से अँगरेज़ों ने शमशेर बहादुर को ज़ेर किया। शमशेर बहादुर ने कई एक शिकस्तें खाकर अंगरेजों की मातहती कुबूल करली। झांसी के मरहटा किलेदार ने भी अँगरेजों की मातहती कुबूल कर ली। बस अँगरेजों ने पैर फैलाए कहां तो आए थे हिम्मतबहादुर की मदद करने कहां अब विजित देश के स्वयं मालिक बनने का उन्होंने इरादा किया और हिम्मतबहादुर को उतनाही हिस्सा दिया जितना उसके पास पहिले था। हिम्मतबहादुर के जेठे भाई उमरावगिरि को किसी कुसूर में नवाब लखनऊ ने कैद कर लिया था। नवाब लखनऊ बकसर की लड़ाई में अँगरेजों से हार चुके थे और अँगरेजों के डर से डरते थे। हिम्मतबहादुर ने अँगरेजों की मदद से अपने भाई की रिहाई कराई और उन्हें रजभान की जागीर पर बहाल कराया और आप बांदे में रहकर बुंदेलखंड में जो हिस्सा पाया था उसके

मालिक बने रहे। कहते हैं उमरावगिरि ने एक ब्राह्मण की लड़की से शादी करली थी और एक रंडी भी रख ली थी। हिम्मतबहादुर ने भी भाई की देखादेखी अथवा होनहार वश लंगोटबंदी भूल एक रंडी रखली थी और एक चेला भी किया था। उमरावगिरि के असली बीबी से ६ लड़के और रंडी से ३ लड़के थे। हिम्मत बहादुर को एक रंडी का लड़का और एक चेला था। इन सब के नाम वंश वृक्ष में देखिए। इसी कारण अब इस वंश की दो शाखें होगईं। उमरावगिरि की सन्तान तो रजधानिया गोशाईं कहलाते हैं और हिम्मत बहादुर की सन्तान 'बांदावाले' कहे जाते हैं।

हिम्मत बहादुर बुंदेलखंड के पैदा हुए ब्राह्मणसन्तान थे इसलिये अलीबहादुर को बुलाकर उसकी मदद से नोने अर्जुन सिंह का मारना और अपनी मदद के लिये निजस्वार्थ वस अँगरेजों को बुलाकर बुंदेलखंड के कुछ हिस्से में उनका कबज़ा करा देना पूरा देशद्रोही काम था। इस देशद्रोह का फल उन्हें बहुत ही शीघ्र भोगना पड़ा। अर्थात संवत् १८६१ में हिम्मत बहादुर का देहान्त हो गया और अङ्गरेजों ने उनकी कुल जागीर जब्त करली। और उनके रण्डी वाले लड़के और भाई को कुछ जागीर गुज़र बसर के लिये दी। इन दोनों के मरने के बाद वह भी जप्त हो गई और उनके वंशधरों को कुछ नगदी वसीका मंजूर किया गया जिन के वंशधर आज तक भी कानपुर, फतेहपुर, काशी, पन्ना, नवगांव और बुंदेलखण्ड के अनेक स्थानों में हैं और इतना थोड़ा रुपया उन्हें बतौर वसीके के मिलता है कि उनमें से अधिक जन बहुत ही बुरी दशा में हैं। पन्ना वाले प्रख्यात कवि अस्कन्दगिरि इसी वंश के थे। वंश वृक्ष का उतना ही हिस्सा हम इस स्थान में देते हैं जितना इस पुस्तक के लिये हम आवश्यक समझते हैं॥

———:o:———

जैरामगिरि
सुंदर गिरि
बंगा बख्श
उत्तमगिरि
राजागिरि
जीवनगिरि
हंसराजगिरि
जगत गिरि
गंगागिरि दिलावरजंग
कु० नरेन्द्र गिरि
कु० कंचन गिरि
न० १, ४, और ५ की औलाद के लोग अब तक पाए जाते हैं।
उमरावगिरि
अनूपगिरि हिम्मत बहादुर
गोसाईं राजेन्द्रगिरि
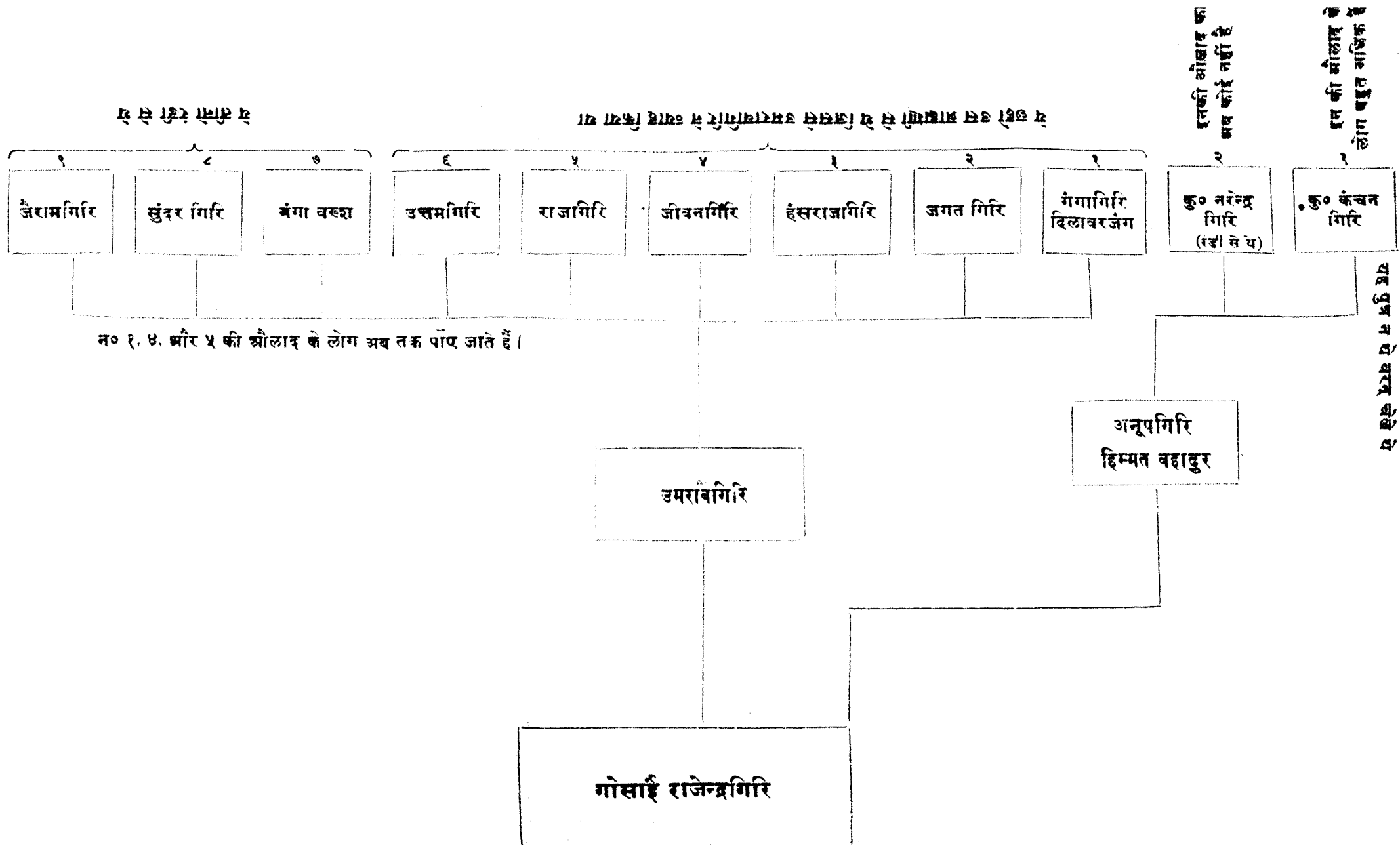
नोने अर्जुनसिंह का संक्षिप्त हाल।

:0:

इनका असली नाम अर्जुनसिंह और 'नोने' * इनका खिताब था जो इनको बांदेवाले राजा गुमानसिंह ने दिया था। पँवार क्षत्री थे। इनके पिता रियासत जैतपुर के एक छोटे से जागीरदार थे। हिम्मतबहादुर की जन्मभूमि कुलपहाड़ से पश्चिम एक कोस पर कुँवरपुर ग्राम में इनके पिता रहा करते थे। यह गांव इन्हीं के पिता ने बसाया था और वहीं एक गढ़ी भी बनवाई थी जो अब भी मौजूद है। परन्तु गांव का नाम अब बदल कर 'सुँगरा' हो गया है। इनके कुछ भाई बिरादर रियासत चरखारी के 'वंसिया' नामक गांव में रहते थे। अब भी इनके कुछ वंशधर 'वंसिया' में मौजूद हैं। परन्तु अधिक तर इनके वंशधर अब 'दतिया' में पाए जाते हैं जहां अर्जुनसिंह की बहिन ब्याही थी। शुरू जवानी के दिनों में कहते हैं कि अर्जुनसिंह एक साधु की सेवा किया करते थे जो उनके गांव के निकट ही जंगल में रहा करता था। उस साधु ने इन्हें बरदान दिया था कि तू तीन लड़ाइयां जीतेगा और अपने ही वंश वाले के हाथ से मारा जायगा। पूर्ण जवान होने पर और उस समय की रीत्यानुसार युद्ध विद्या में निपुण होने पर पहिले ये चरखारी में नौकर हुए। पर किसी कारण से उस समय के चरखारी नरेश खुमानसिंह से लड़ झगड़ कर बांदे वाले राजा गुमानसिंह के यहां चले गए और सिपाहियों में नौकर हुए। युद्ध विद्या में निपुण थे ही, बहुत जल्द ही गुमानसिंह ने इन्हें अपना कृपापात्र बनाया। जब हिम्मतबहादुर और करामतखां ने बुंदेलखंड पर चढ़ाई की और तेंदवारी के मैदान में बांदे वाले गुमानसिंह ने उनका मुकाबला किया उस युद्ध में अर्जुनसिंह ने बड़ी वीरता दिखलाई और शत्रु को हटाकर जमुना उस पार भगा दिया। यह अर्जुनसिंह की पहिली विजय हुई। बांदानरेश गुमानसिंह ने इन्हें * 'नोने' का खिताब दिया और अपना सेनापति बनाया। इन्हीं दिनों पद्माकर कवि से इनसे जान पहिचान हुई। इनकी पंडिताई पर

---

* बुंदेलखंडी भाषा में 'नोने' शब्द का अर्थ है "अच्छे" यह लोने शब्द का रूपान्तर है।

रीझ कर अर्जुनसिंह ने पद्माकर को अपना दीक्षागुरु बनाया। पद्माकर ने भी इनकी श्रद्धा भक्ति से संतुष्ट होकर एक लक्ष चंडी पाठ का अनुष्ठान कराके अर्जुनसिंह के लिये एक तलवार सिद्ध की। वही तलवार अर्जुनसिंह बांधते थे और वही इनके वीरत्व की स्तम्भ रूप थी। उस समय से आजतक अर्जुनसिंह के वंशधर पद्माकर के वंशधरों को अपना कुलगुरु मानते आते हैं और अब भी अर्जुनसिंह के वंशधरों में से बहुत से लोग पद्माकर के वंशधरो के चेले हैं। संवत् १८४२ में नोने अर्जुनसिंह ने चरखारी नरेश खुमानसिंह को मौज़ा पनवारी के समीप शिकस्त दी। खुमानसिंह इस युद्ध में अर्जुनसिंह के हाथ से मारे गए। यह नोने अर्जुनसिंह की दूसरी फतह थी। तीसरी और सब से भारी विजय अर्जुनसिंह को गठ्यौरा की लड़ाई में मिली जिससे पन्ना राज्य का बहुतसा हिस्सा अर्जुन के हाथ लगा। कहते हैं इस लड़ाई में अर्जुनसिंह के १८ घाव लगे थे। इस गठ्यौरा की लड़ाई को बुंदेलखंड का महाभारत कहना चाहिए। (हम इस युद्ध का हाल एक स्वतंत्र पुस्तक में लिख रहे हैं जो समय पर प्रकाशित की जायगी) हमारी समझ मे नहीं आता कि वह कौन सी बात थी जिसने कवि पद्माकर को कुल गुरू और देशकवि होने पर भी इस गठ्यौरा की लड़ाई के कारण 'अर्जुनसिंह विरदावली' न बनाकर 'हिम्मतबहादुर विरदावली' बनाने पर मजबूर किया। यह बनगांव वाली लड़ाई जिसमे अर्जुनसिंह मारे गए। गठ्यौरा की लड़ाई के मुकाबिले में बहुत ही छोटी लड़ाई थी। बस [illegible]धु के बरदानानुसार अर्जुनसिंह ने तीन बड़ी बड़ी फतहें पाई जिनका वर्णन हम कर चुके, यह चौथी बड़ी लड़ाई थी जिसका वर्णन इस पुस्तक मे कवि ने लिखा है।

नोने अर्जुनसिंह वास्तव मे सच्चा वीर क्षत्री था। युद्ध मे उसका इतना अनुराग था कि उसने स्वयं एक रणवाद्य ईजाद किया था जो अब तक बुंदेलखंड में प्रचलित है, इस बाजे का नाम 'लग्गी' है। चंग से कुछ छोटा और खझली से कुछ बड़ा उसी प्रकार की बनावट का यह बाजा होता है, अब तक कुलपहाड़ के ईर्द गिर्द के गावों के कुरमी काछी इत्यादि इस बाजे को एक छोटी लकड़ी से बजा बजा कर अर्जुनसिंह की वीरता के गीत गाया करते हैं। इस बाजे

का स्वर बहुत ही सुहावना और गंभीर होता है। हमारी राय में इसका स्वर सुन कर वीरों को अवश्य रणचाव बढ़ता रहा होगा। हमने स्वयं इस बाजे को देखा और सुना है।

हिम्मत बहादुर और अर्जुनसिंह का मुकाबिला किया जाय तो यह बातें मालूम होंगी।

१—अर्जुनसिंह क्षत्री था और सच्चा क्षत्री था। हिम्मतबहादुर भिक्षा वृत्तिधारी सनाढ्य ब्राह्मण का लड़का और पराया माल उड़ाने वाले गोसाईं का चेला था।

२—अर्जुन ने स्वदेश वासी क्षत्रियों की क्षत्री की भांति सेवा की। हिम्मतबहादुर ने ब्राह्मणवीर्य्य तथा गोसाईं धर्म का शिवभक्त होकर विदेशी और विधर्मी यवन की सेवा की।

३—अर्जुन सिंह ने कभी किसी से सहायता नहीं मांगी वह सदैव निज भुजबल से लड़ता रहा और दूसरों की सहायता करता रहा। हिम्मत बहादुर हमेशा दूसरों की सहायता का प्रयासी रहा।

४—हिम्मतबहादुर अपना निज स्वार्थ विचार के लड़ाई करता था, अपना राज्य स्थापित करना चाहता था जो न हो सका। अर्जुनसिंह लड़ाई लड़कर जो गांव वा परगने जीतता था वह अपने नाबालिग़ मालिक को अर्पण करता था और यदि अर्जुन चाहता तो उस समय अपना निज का राज्य स्थापित कर लेता।

५—उतरती उम्र में हिम्मत बहादुर ने अपने चाल चलन में धब्बा लगा लिया था जो एक वीर पुरुष के लिये बड़ी निन्दा की बात है। अर्जुनसिंह के विषय में ऐसी कोई बात सुनी नहीं जाती।

६—हिम्मत बहादुर ने एक प्रकार से देश द्रोह किया। अर्जुनसिंह इस दोष से बरी है। वरन् देश द्रोहियों से लड़ने के कारण हम उसे स्वदेश भक्त कह सकते हैं।

इन्हीं सब कारणों से बुन्देलखण्ड में अर्जुनसिंह का नाम जिस आदर से लिया जाता है वह आदर हिम्मतबहादुर के नाम को कहां मिल सकता है। अर्जुनसिंह हिम्मतबहादुर से परास्त हुए यह एक दूसरी बात है जिसका कारण भी हम लिख चुके हैं।

———०———

हिम्मतबहादुरविरदावली ।

छप्पय ।

जय जय जय व्रज-जलधि-
चन्द आनन्द-बढ़ावन ।
जय जय जय नँद-नन्द
जगत-दुख दन्द-घटावन ॥
जय जय केसी कंस
बच्छ बक रच्छस-दण्डन ।
जय जय गिरिवर धरन
मान मघवामन षण्डन * ॥
जय पद्माकर भारथ समर
पारथ सखयरु सिद्ध धनि ।
नित नृप अनूप गिरि भूपकहँ
बिजय देहु यदुवंश-मनि ॥ १ ॥

नित देहु जय यदुबंस-मनि
अवतंस नौऊ खण्ड को ।

---

* 'ख' को 'ष' लिखना बुन्देलखण्डी कम लियाकत लेखकों की प्रणाली है । पद्माकर जी ने ऐसा कदापि न लिखा होगा ।

१—इस चरण में मात्रा तो ठीक है पर पढ़ने में कुछ खटकता है ॥

[1]गिरि राज इन्द्र नरिन्द नन्दन
भवन तेज अखण्ड को ॥
* पृथुरित्ति नित्त सुवित्त दै
जग जित्ति कित्ति अनूप की ।
वर वरनियै विरदावली
हिम्मत बहादुर भूप की ॥ २ ॥

हाकल छन्द।

हिम्मत बहादुर भूप है
सुभ सम्भु रूप अनूप है ।
दिल दान बीर दयाल है
अरि वर निकर को काल है ॥ ३ ॥
सुख साहिबी अमरेस है
भुव भार धर भुजँगेस है ।
मनु मौज देत महेस है
गुन ज्ञानवान गनेस है ॥ ४ ॥
अरि-तोम-तम-तिमिरारि है
अरि-नगर-दग्ध-दमारि[2] है ।

१—हिम्मत बहादुर के गुरू का नाम राजेन्द्रगिरि था, उन्होंने इन्हें पुत्रवत् लड़कपनसे पाला था। इसी से ऐसा लिखा। वास्तव में राजेन्द्रगिरि हिम्मत बहादुर के पिता न थे।

* राजा पृथु की भाँति नित्य ही बहुत सा धन देकर जग को जीत किया और अनुपम कीर्ति फैलाई।

२—'दमारि'—यह शब्द 'दावानल' का अपभ्रंश सा ज्ञात होता है 'व' का उच्चारण बुन्देलखण्ड में बहुत करके 'मा' का सा होता है जैसे 'दवारि' का 'दमारि', 'पवाँर' का 'पमार'।

जग माँझ दीन दयाल है
तन महा बाहु विसाल है ॥ ५ ॥
धन ध्रुव धरम को मूल है
अब हिन्दु लाज दुकूल है ।
दुति दिपति देह मनोज है
मनु मौज देतनिभोज है ॥ ६ ॥
सुभ डील सील समुद्र है
घमसान मे जनु रुद्र है ।
चउँसठि कलानि प्रवीन है
दुज देवतानि अधीन है ॥ ७ ॥
मुख बोल कहत अडोल है
गज बाजि देत अमोल है ।
सुभ सत्य जनु हरिचन्द है
नित प्रजनि आनँद कन्द है ॥ ८ ॥
दुख दायकन को काल है
जग कीन्ह जिहि जस जाल है ।
अति दिपत निज कुल दीप है
वर विक्रमी अवनीप है ॥ ९ ॥
कलि सिन्धु पुन्य जहाज है
करि देत सब के काज है ।
कवि कुल कमल को भानु है
परतीति नीति निधान है ॥ १० ॥

१—मनु मौज देतनिभोज है—इसका अर्थ हम नहीं समझे । पर ४ छन्द में कवि ने कहा है, 'मनु मौज देत महेस है' ॥

गुन ज्ञान मान सुचन्द है
नित करत खल मुख मन्द है * ।
जग औतर्‌यौ जु अनूप है
महिपाल नव रस रूप है ॥ ११ ॥

निज नाइकन जु सिँगार है
अरि लखत वीर अपार है ।
लखि दीन करुना वत्स है
खल कतल में बीभत्स है ॥ १२ ॥

निज खिलवतिन में हास है
भय रूप दुरजन पास है ।
हय चढ़त अद्भुत होत है
सर लेत रुद्र उदोत है ॥ १३ ॥

सिव भजन सांत सुजान है
जिहिं को समान न आन है ।
हिम्मत बहादुर नृप बली
जिहिं सेन सत्रुन की दली ॥ १४ ॥

१—'गुन ज्ञान मान सु चन्द है'—४थे छन्द में स्वयं कवि ने यों कहा है कि 'गुन ज्ञान मान गनेस है' ॥

२—फौज में 'नायक' एक पदाधिकारी होता है । और शृंगार रस के लिये नायकाओं की आवश्यकता प्रगट है । अतएव श्लेष से कवि ने अपना वचन निबाहा ।

३—खिलवतिन=खिलवती फारसी भाषा का शब्द है । अर्थ है अंतरंग सखा ।

दिग विजय काज महूमे[1] की
अरि देस देसन धूम की ।
गूजर गलीमं[2] लगाइ कै
सुबुँदेलखण्डहि आइ कै ॥ १५ ॥
दतिया मु प्रथम दबा दई
खण्डी[3] सुमन मानी लई ।
फिर मुलक नृप छतसाल को
दाबो प्रबल रिपु जाल को ॥ १६ ॥
जहँ अमल[4] अर्जुन इक करै
नहि बादसाहन को डरै ।
जिहिं लूटि नृप बहुतै लये
बहु मारि मारि भजा दये ॥ १७ ॥
तिहि पै नृपति अति कोपि कै
आयो अटल पग रोपि कै
सब मुलक जयती करि लियो
फिरि बाँटि फौजन को दियो ॥ १८ ॥

१—'महूम' फारसी शब्द 'मुहिम्म' का अपभ्रंश है—अर्थ 'चढ़ाई'

२—'गलीम' फारसी शब्द 'गनीम' का अपभ्रंश है अर्थ 'शत्रु' इससे यह लक्षित होता है कि हिम्मत बहादुर ने किसी समय गूजर देश अर्थात् गुजरात पर भी चढ़ाई की थी।

३—'खण्डी'—ठेठ बुन्देलखण्डी शब्द है—अर्थ 'चौथ' वा 'राजकर ॥

४—'अमल' फारसी शब्द है, अर्थ है 'राज्य' वा हुकूमत। ज्ञात हो कि अर्जुनसिंह राजा नहीं थे बरन बांदावाले राजा गुमानसिंह के सेनापति थे।

इहि क्रम सु अर्जुन के निकट
आयौ नृपति अति ह्वीं विकट ।
नद केन पै डेरा करे
तहँ जुद्ध को भे हरवरे ॥ १९ ॥
सुभ जोतिषी सु बुलाइ कै
पूंछो सुदिन सिर नाइ कै ।
अब कहौ जुद्ध कबै करैं
जब कहो साइत तब लरैं ॥ २० ॥
यह सुनि हुकुम महराज को
दिल खुसी जोतिष राज को ।
सु सरूप सिंह सुनाम के
बोले वचन जय काम के ॥ २१ ॥
सुर सास्त्र सकल विचारि कै
सुभ दिन कह्यौ निरधारि कै ।
संवत अठारह सै सुनौ
उनचास अधिक हिये गुनौ ॥ २२ ॥
बैसाख बदि तिथि द्वादसी
बुधवार जुत गह याद सी ।
यह सुभ दिवस है लरन को
है जुवा सुर नृप बरन को ॥ २३ ॥
यह अजैगढ़ बलहीन है
जहँ अरिन डेरा कीन है ।
यह सुनि सुदिन सुख पाइ कै
डंका दियौ सिव ध्याइ कै ॥ २४ ॥

१—'हरवेरे' अन्तरवेदी ग्रामीन भाषा का शब्द है। अर्थ शीघ्र वा जल्दी ।

सुभ संख सूरन के बजे
    रनधीर वीर सबै सजे ।
दुंदुभि धुकारैं धुकहीं
    अरि सुनत जित तित लुकहीं ॥ २५ ॥
तहँ प्रबल दल बल सज्जि कै
    चढ़ि चल्यौ हरवर गज्जिकै ।
रनधीर वीर पमार पै
    जहँ अरयो अर्जुन रार पै ॥ २६ ॥
सँग लिये छत्रिन की कुरीं
    कबहूं न जे रन में मुरीं ।
चौहान चौदह आकरे
    धंधेर धीरज धाकरे ॥ २७ ॥
बुंदेल विदित जहान में
    जे लरत अति घमसान में ।
बघरू बघेले करचुली
    जिनकी न बात कहूं डुली ॥ २८ ॥
रन रैकवारन के झला
    जे करत अरि दल पै हला ।
गज्जत सुहरवारहु सजे
    जुरि जंग जेन कहूं भजे ॥ २९ ॥
वर वैस वीर जुझार जे
    झुकि झमकि झारत सार जे ।
गौतम तमकि जे रन करैं
    अरि काटि कटि काटि कै लरैं ॥ ३० ॥
पड़िहार हार न मानहीं

जिन कौं हरष घमसानहीं ।
उद्धत सुलंकी साहसी
जे करत रन में राहसी ॥ ३१ ॥
रजपूत राना हैं सजे
जिनके खड़ग रन में जगे ।
हरखे सु हाड़ा हिम्मती
जिनकी जंगत रन किम्मती ॥ ३२ ॥
राठौर दुर ठौरन गने
रिपु जियत नहि जिन के हने ।
रन करकरे कछवाह हैं
जे लरत दिग्घ दुबाह हैं ॥ ३३ ॥
सँग लिये सूर सिसौदिया
जिनकौ जुरत फूलत हिया ।
तहँ तौंर तीषन ताकिये
रन बिरद जिन के बांकिये ॥ ३४ ॥
सेंगर सपूती सों भरे
जे सुद्ध जुद्धन में लरे ।
रन अटल वीर इटौरिहा
जे रन जुरत सिरमौरिहा ॥ ३५ ॥
बिलकैत बीर बली चढ़े
सफजग रंग सदा मढ़े ।
नदवान नाहर पिपरिहा
बलके बनाफर सिपरिहा ॥ ३६ ॥
सिरमौर गौर गराजि कै
सोभित सिलाहैं साजि कै ।

तनधीर वीर चँदेल हैं
    जे लरत रन बगमेल हैं ॥ ३७ ॥
अब और दल कह लौं गनौं
    सब ठाकुरन सों है सनो ।
गज्जत अजैगढ़ के निकट
    सब एक एकन ते विकट ॥ ३८ ॥
जहँ सूर संख बजावहीं
    दिसि दिसनि दिग्गज दावहीं ।
धुनि धीर दुंदुभि धुक्कैं
    सुनि वीर हुडकत हुक्कैं ॥ ३९ ॥
बज्जत सुगज्जत खाखरे[1]
    जे करत दिसि दिसि साकरे ।
धौसा धुकारन धसमसैं
    धर के धरैया कसमसैं ॥ ४० ॥
बज्जैं अरब्बी[2] उमडि कैं
    गज्जैं मनौ घन घुमड़ि कैं ।
विरदावली कविवर पढ़ैं
    सुनि वीर हरषि हिये बढ़ैं ॥ ४१ ॥
जहँ जांगरे करखा[3] कहैं
    अति उमँगि आनँद को लहैं ।
दल साजि यों अर्जुन बली
    सजि खड़ो भो रन की थली ॥ ४२ ॥

---

१ खाखरे = एक प्रकार का बाजा ।

२ अरब्बी = ताशा ।

३ करखा = उत्साहवर्द्धक गान ।

इत तें ठिल्यौ सु अनूप गिरि
यह कहत परने है अभिरि ।
सब तोप खानो अग्र कर
जिहि को दिगंतन लौं असर ॥ ४३ ॥

धुनि धीर दुंदुभि गज्जहीं
जे सुनत वारिद लज्जहीं ।
फहरे गयंद निसाँन है
जिन की जगत जग आन है ॥ ४४ ॥

छप्पय ।

आन फिरत चहुँ चक्क धाक
धक्कन गढ़ धुक्कहिं ।
लुक्कहिं दुवन दिगंत जाइ
जहँ तहँ तन मुक्कहिं ॥
दुंदुभि धुनि सुनि धीर जलद
मन मद तजि लज्जहिं ।
भज्जहिं खल दल विकल
सोक सागर महँ मज्जहिं ॥
धनि राजइंन्द्रगिरि[1] नृप सुवन
उथपन थप्पन जग जयउ ।
बर नृप अनूप गिरि भूप जब
सुभट सेन सज्जत भयउ ॥ ४५ ॥

---

१ राजइन्द्रगिर = राजेन्द्रगिरि, हिम्मत बहादुर के गुरु का नाम है ।

हरिगीतिका ।

नृपधीर वीर बली चल्यौ, साजि सेन समर सुखेल की।
सुनि बंब[1] बीरन के बढ़ी, हिय हौस बर बगमेल की ॥
पृथु रित्ति नित्त सुवित्त है, जग जित्ति कित्ति अनूप की।
वर वरनियै विरदावली, हिम्मत बहादुर भूप की ॥ ४६ ॥

डिल्ला छंद ।

समर प्रबल दल दिग्घ उमंडिय
दुंदुभि धुनि दिगमंडल मंडिय ।
घर्घरात घन तें अति धुक्कनि
भर्भरात अरि भजत सुलुक्कनि ॥ ४७ ॥
उनमद.दुरद घटनि छबि छज्जिय
जौन जलद पटलनि तकि तज्जिय ।
उच्च निसान गगन महँ झुल्लहिं
सुर विमान झकझोरन भुल्लहिं ॥ ४८ ॥
झलमलात झूलन छबि ठानिय
विज्जुल मनहु मेघ लपटानिय ।
अडत फेर ऐंडात उमंडत
झूमत झुकत भजत धुनि मंडत ॥ ४६ ॥
उलहत मदन समुद मद गारत
गिरिवर गरद मरद करि डारत ।
सिंदूरनि सिर सुभग उमंडिय
उदयाचल रवि छबि छिति खंडिय ॥ ५० ॥

---

१ बंब-समरारंभ निनाद—हिम्मत बहादुर जी शिव उपासक थे, अतएव "बंब, हर हर"—के निनाद से समर आरंभ करते थे।

घनघनात गजघंट उमंगनि
सनसनात सुर श्रुति सुभ अंगनि ।
घुमड़ि चलत घुम्मत घन घोरत
सुंडन नषत झुंड झकझोरत ॥ ५१ ॥
चलत मतंगनि तकि तमंकिय
पष्षरैत[1] हय हुडक हुमंकिय ।
सिर झारत न सहत मृग सोभनि
कहुँ कहुँ चलत छुवत छितिछोभनि ॥ ५२ ॥
उड़त अमित गति करि २ लाछन
*जीतत जनु कुलटान कटाछन ।
थिरकत थिरकि चलत अँग अंगनि
जीतत जुमकि पौन मग संगनि ॥ ५३ ॥
पच्छ रहित जीतत उडि पच्छिय
अंतरिच्छ गति जिन अवलच्छिय ।
दिनन अमोल लोल गति चल्लहिं
विदित अमोल गोल दल मल्लहिं ॥ ५४ ॥
बाग लेत अति लेत फलंगनि
जिमि हनुमत किय समुद उलंघनि ।
जिन पर चढ़त सिंधु ढिग लग्गहिं
मंडल फिरि २ उठत उमग्गहिं ॥ ५५ ॥

---

१ पष्षरैत = पाखर पड़े हुए--पाखर एक प्रकार की झूल है जो लड़ाई के घोड़ों पर डाल दी जाती है जिससे वे सुरक्षित रहते हैं ।

* वीर रस में श्रृंगार रस का पुट दिया गया है । घोड़ों की चंचलता की उपमा कुलटा नायका के कटाक्षों से दी गई है । यह कवि की रसिकता की अधिकता का परिचय है ।

पवन प्रचंड चंड अति धावहिं
तदपि न तिनहिं नेक छ्वै पावहिं ।
तिन चढि भट छबि छटन छलक्किय
रन उमंग अँग अंग झलक्किय ॥ ५६ ॥
उमड़ि अग्रवर पैदर दिन्हउ
जिन हठि प्रथम जुद्ध अन लिन्हउ ।
बंदी जन विरदावलि वुल्लहिं
सुनत सुभट दृगकमल प्रफुल्लहिं ॥ ५७ ॥
मानव सुरन अलापन ठढ्ढिय
वीर उरनि रस वीर सुबढ्ढिय ।
सार झलाक झलमल छबि उग्गय
मानहु अमित भानु भुव उग्गय ॥ ५८ ॥
उमड़त दल छिति डग डग डुल्लत
कल्लोलनि बढ़ि समुद उछल्लत ।
गढ़ धुक्कहिं गढ़पति उर कंपहिं
शत्रु सोक सागर महँ झपहिं ॥ ५९ ॥
धूरि धुंध मंडित रवि मंडल
अकवकात अलकेस अखंडल ।
थंभि न सकत भूमिधर दिक्करि
डुट्टत रद्द फटत नभ चिक्करि ॥ ६० ॥

छप्पय ।

चिक्करि चिक्करि उठहिं
दिक्क दिक्करि करनिन जुत ।

खल दल भज्जत लज्जि
ताज्जि हय गय दारा सुत ॥
संकत लंक अतंक वंक
हंकनि हुङकारत ।
डग डग डुल्लत गव्वि
सब्ब पब्बयन सिधारत ॥
तहँ पद्माकर कविवरन इमि
नृप अनूप गिरि जब चल्यउ ।
तब अमित अरोबो[1] अखिल दल
इक्क बार छुट्टत भयउ ॥ ६१ ॥

हरिगीतिका ।

छुट्टत भयउ इक बार जब, सब तोप खानौ तड़कि कै ।
टुट्टत भयउ गढ वृंद गढपति, भाजि गे सब सड़कि कै ॥
पृथुरित्ति नित्त सुवित्त दै जग, जित्ति कित्ति अनूप की।
बर बरनिये विरदावली, हिम्मत बहादुर भूप की ॥६२॥

भुजङ्गप्रयात छन्द ।

तुपक्कैं तड़क्कैं धड़क्कैं महा हैं
प्रलै चिल्लिका[2] सी झड़क्कैं जहां हैं ।
खड़क्कैं खरी वैरि छाती भड़क्कैं
सड़क्कै गये सिंधु मज्जै गड़क्कैं ॥ ६३ ॥

---

१ अराबो—सब तोपों का एकदम छूटना ।

२ चिल्लिका—बिजली, गाज, वज्र, ।

चलै गोल गोली अतोली सनंकैं
मनौ भौंर भौंरैं उड़ातीं भनंकैं।
चढ़ी आसमानै छई बे प्रमानै
मनौ मेघमाला गिलै भासमानैं ॥ ९४ ॥
गिरैं ते मही में जहीं भर्भराकैं
मनौ स्याम ओरे परैं झर्झराकैं।
चलैं रामचङ्गी धरामे धमंकैं
सुने तें अवाजैं वली वैरि संकैं ॥ ९५ ॥
तमंचे तहां वीर संचे छुड़ावैं
कसे वंक वानै निसानै उड़ावैं।
छुटी एक कालैं विसालैं जँजालैं
जगी जामँगीं त्यौं चलैं ऊंटनालैं ॥ ९६ ॥
गजै गाजसीं छूटतीं त्यौं गनालैं
सुनैं लज्जतीँ गज्जती मेघ मालैं।
चलीं मूँगरी उच्च है आसमानै
मनौ फेरि स्वर्गै चढे दिग्घ दानै ॥ ९७ ॥
परी एक वारै धमाधम धरा है
मनौ ये गिरी इन्द्र हू की गदा है।

---

१ रामचंगी—एक प्रकार की तोप ॥
२ जँजाल—एक प्रकार की बड़ी तोप।
३ जामगी— बन्दूक वा तोप में आग देने की बत्ती—बौंड़ा-वा तोड़ा ॥
४ ऊँटनाल—छोटी तोप जो ऊंट पर से चाली जाती है।
५ गनाल—एक प्रकार की बड़ी तोप ॥
६ मूंगरी—एक प्रकार की तोप।

किधौं ये विमानन्न की चक्र भुंडैं
परी टूटि है कै विराजै भसुंडैं ॥ ६८ ॥
छुटी है अचाका महावानवाली
उड़ी है मनौ कोपि कै पन्नगाली ।
खरी कुहकुहाती जुड़ाती नहीं हैं
चली हैं अनंतैं दिगंतैं दही हैं ॥ ६९ ॥
चली चद्दरैं[1] त्यों मचे हैं धड़ाके
छड़ाके फड़ाके मड़ाके खड़ाके ।
छुटे सेरबच्चे[2] भजे वीर कच्चे
तजैं बालबच्चे फिरैं खात दच्चे ॥ ७० ॥
छुटे सब्ब सिप्पे[3] करैं दिग्घ टिप्पे
मचे मत्र छिप्पे कहूं हैं न दिप्पे ।
करावीन छुट्टैं करैं वीर चुट्टैं
करी कध टुट्टैं हनै उत्त बुट्टैं[4] ॥ ७१ ॥
चली तोप धां धां घधां धांइ जग्गी
धड़ाधड़ धड़ाधड़ धड़ा होन लग्गी ।
झड़ाझड़ झड़ा वीर बांके छुड़ावैं
भड़ाभड़ भड़ाभड़ भड़ा त्यौं मचावैं ॥७२॥
दगो यों अराबो सबै एक वारै
किधौं इन्द्र कोप्यौ माहावज्र डारै ।

---

१ चद्दरैं—एक प्रकार की तोपैं ॥

२ सेरबच्चा—एक प्रकार की बन्दूक जिसे अब 'झोंका' कहते हैं ।

३ सिप्पा- एक प्रकार की छोटी तोप ।

४ बुट्टैं—भाग जाते हैं (अन्तरवेदी ग्रामीन शब्द है ।)

किधौं सिंधु सातौ सबै भर्भराने
　　प्रलैकाल के मेघ कै घर्घराने ॥ ७३ ॥
सुनीं जो अवाजैं सबै बैरि भाजैं
　　न लाजैं गहैं छोड़ि दीन्ही समाजैं ।
तजैं पुत्र दारैं सम्हारैं न देहैं
　　गिरैं दौरि उट्ठैं भजैं फेरि जेहैं ॥ ७४ ॥
उलथ्थैं पलथ्थैं कलथ्थैं कराहैं
　　न पावैं कहूं सोक सिन्धून थाहैं ।
तजैं सुन्दरी त्यों दरी में धसे हैं
　　तहां सिंह बग्घानहू ने ग्रसे हैं ॥ ७५ ॥

छप्पय ।

छिति अति छज्जिय अत्र
　　छत्र छाहन छवि छक्किय ।
चहुव चक्र धक पक्क अरिन
　　अकबक्क धरक्किय ॥
इक्क दुवन ताजि धरनि
　　सरन तुव चरन सु तक्किय ।
हय गय पयदल छोड़ि
　　छोड़ि सुख सागर नक्किय ॥
जय भग प्रताप जग्यव उमगि
　　उथल पथल जल थल गयउ ।
नृपमनि अनूपगिरि भूप जब
　　निज दल बल हंकत भयउ ॥ ७६ ॥

हरिगीतिका छन्द ।

हंकत भयउ निज दल सकल

हैकरि भटनि की पिट्ठि पै ।
हर हरषि भाषत तहाँ राषत
डिट्ठि अरि की डिट्ठि पै ॥
पृथु रित्ति नित्त सुवित्त दै
जम जित्ति कित्ति अनूप की ।
वर वरनिये विरदावली
हिम्मत बहादुर भूप की ॥ ७७ ॥
हिम्मत बहादुर नृपति यों
करि कोप आगे को चल्यौ ।
रन धीर बीरन सङ्ग लै
जिन मान मीरन को मल्यौ ॥
जिरही[1] सिलाही ओपची
उमड़े हथ्यारन को लिये ।
बनि बेस केसरिया अरिन को
निरषि अति हरषे हिये ॥ ७८ ॥
तहँ बहु नगारे विदित भारे
भुव धुकारे गज्जहीं ।
सुनि धुनि धमाके चहुँबघा के
घन घमाके लज्जहीं ॥
उमड़ो सुदल बल प्रबल जिमि
घनघोर जोर अषाढ़ को ।
तिहिं निरखि प्रबल पमार दल पर

---

[1] जिरही=जिरह पहने हुए, कवचधारी।
सिलाही=सिलाह पहने हुए, सिलाह भी एक प्रकारका कवच है।
ओपची=ओपच पहने हुए, 'ओपच' एक प्रकार का कवच।

परयौ बखत सु गाढ़ को ॥ ७९ ॥
तहँ रन उतङ्ग मतङ्ग माते
उमड़ि बद्दल से रहे ।
चहुँओर धुरवा से घुमड़ि
घर धूरि धारन के थहे ॥
झम झम झलासे बान बर
चपला चमक बरछीन की ।
भननात गोलिन की भनक
जनु धुनि धुकार झिलीन की ॥ ८० ॥
विसि दिसन दादुर से उमगि
सुनकाकि दुंदि मचावहीं ।
कलकीर कोकिल से तहाँ
ढाढ़ी महाधुनि छावहीं ॥
रन रंग तुंग तुरंग गण
सत्वर उड़त्त मयूर से ।
तहँ जग मगाँना जामंगी[1]
जुगनूनहू के पूर से ॥ ८१ ॥
फहरे निसान दिसान जाहिर
धवल दल बकपन्त से ।
हद हियन हर्षित बीरबर
फूले फिरत रति कन्त से ॥
बलके सवार सपूत अति
मजबूत नद से उमड़ि कै ।
अरि ओर ओरे सीपरैं

१—जामगी = तोड़ा ।

घन घोर गोली घुमड़ि कै ॥ ८२ ॥
फर फिरत डोले अरि अडोले
परत गोले गाज से ।
कमनैत करन कमान वृन्द
सुइन्द्रधनुष दराज से ॥
मदमत्त महत मतंग मद
झर्झर सुनिर्झर से झिरैं ।
धनि धीर धौंसा गजन पर
घन घोर गर्जत से फिरैं ॥ ८३ ॥
इमि साजि दल हिम्मतबहादुर
नृपति वीर हला कियौ ।
जहँ प्रबल बीर पमार अर्जुन
सिंह हर्षित है हियौ ॥
अति कठिन भूमि मवास ऊपर
अजैगढ़ सोहै किला ।
चहुं ओर पर्वत बन सघन तहँ
आपु डीलन नृप पिलो ॥ ८४ ॥
जहँ और फौजन को न सपनिहु
चित्त जैबे को चले ।
तहँ नृपति बीर अनूप गिरि
पैठो हरषि हांकत दलै ॥
जिमि राम रघुबर दवरि कै
निरसिक लंका पर गयौ ।
हिम्मत बहादुर बीर त्यौं
रनधीर धावत तहँ भयौ ॥ ८५ ॥

तहँ मार खात सुभाँति तिहरी
    प्रथम ऊपर किले की ।
दूजे पहारन की प्रबल
    तीजे जु संगर मिले की ॥
इमि तोप तुपक जँजाल
    सिप्पे वान पैरत नहि रुको ।
तब वीर अर्जुन को तहाँ
    अनगन अरावौ[1] फिर धुको ॥ ८६ ॥
अनगन अरावे के दगत
    तहँ गिरे वीर कितेकहू ।
हय गय सभय ह्वै चिक्करत
    नहि टरत वीर सुचेतहू ॥
तहँ हयन ठेला ठेल
    पेला पेल करि वगमेल की ।
जहँ होइ अर्गुन चलौ तहँ
    नहिं वेर है अब झेल की ॥ ८७ ॥
दिन रहो थोरो दूर डेरो
    फिर न कीन सलाह है ।
पग परैं पीछे इहि वखत
    रन में अजय की राह है ॥
तातें पमारहिं प्रथम दौरि
    मवास[2] ते जु निकारिये ।
निकसै न तौ तितहीं जु
    चलि मरिये कि ताको मारिये ॥ ८८ ॥

१—आरावो धुका—कुल तोपखाने की एकदम फैर ।
२ मवास=सुरक्षित स्थान ।

यह कहत कट कट करि विकट
 भट झपटि आगे कौं दबे ।
मद मत्त हाथिन पर निसान
 कृसानु से फहरत फबे ॥
इक ओर तोपैं प्रलय रोपैं
 नृपहि कोपैं घलि चलीं ।
इक ओर बानन की जु अवली
 अरि थलिन तुरतहिं घलीं ॥ ८९ ॥

तहँ परत गोलन पर जु गोले
 अरि अडोले डगि उठे ।
वर विदित बानन की कुहक
 गज तुरँग कंपत तन पुठे ॥
अति परी खलभल प्रबल दल पर
 अखिल मुख मैले भये ।
कर कँपत एकन के थकत
 पद जौन कादरता ठये ॥ ९० ॥

इमि देखि व्याकुलता सु अर्जुन
 सिंह तहँ गज पर गयौ ।
कर लै निसान कमान बान
 सुभान सम उदित भयौ ॥

तब सेन ते तम रूप भय
 अति सभय तुरत विलाइ गो ।
बरबीर ताको चाउचित
 इक बारहीं तहँ आइ गो ॥ ९१ ॥

तब यह बचन बोलो पमार
　　विचार अब सब मिलि कहौ ।
करिये पसर[1] कित है जु कैसी
　　जौन भांति विजै लहौ ॥
यह सुनि बचन अर्जुन बली को
　　तब बचन एकन कहौ ।
अब निकसि संगर तें जु लरिबौ
　　रन सलाह नहीं रहौ ॥ ९२ ॥
अब होइ सो इत कीजिये
　　कढ़िये न वाहिर कोट तें ।
लरिये जु मन मानो इहां
　　बचिये अरिन की चोट तें ॥
सब तोपखानो अग्र करि
　　धरि धीर इत रहि जाइये ।
जब टूट जाइ कराल संगर
　　तब अरिन पर धाइये ॥ ९३ ॥
यह सुनि विचार पमार तुरतहिं
　　कोप करि बोलो तबै ।
आजनम तें जु सुभाउ मेरो
　　वीर हम जानत सबै ॥
तन ओट के नाते जु कबहूं
　　ढाल हम आड़ी नहीं ।
झट जोटदे तब अरिन को
　　अब कोट ओट कहाँ रही ॥ ९४ ॥

१—पसर करना—हमला करना (ठेठ बुन्देलखण्डी शब्द है)

अब धन्य है हिम्मत बहादुर की
 जु हिम्मत को लखौ ।
जिन तीस कोस कराल भूमि
 मझाइ कै रन अभिलखौ ॥
यह कस्त[1] करि आये यहां
 कै रन हथ्यारन भेटबी ।
रनधीर वीर पर्मार सों
 लरि सुजस छंद समेटबी ॥ ९५ ॥
तातें सलाह यही करौ
 चलि कछुक आगे लीजिये ।
हरषित हथ्यारन सों जु मिलि करि
 रन हकाहक कीजिये ॥
जिसको विजय प्रभु देइ
 सो इत अनायासहि पावही ।
धरि कोट संगरमे जु भिरिके
 कुल कलंक चढ़ावही ॥ ९६ ॥
जिनकी बदी है मीच अब तिनकी
 न इत उत बचहि गी ।
जिनकी नहीं है बिधि रची
 तिनके न तन को तचहि गी ॥
जग मे जु जन्म विवाह जीवन
 मरन रिन धन धाम ये ।
जिहिं को जहाँ लिखि दियो प्रभु
 तिहि कों तुरत तिहि ठाम ये ॥ ९७ ॥

१—कस्त—अरबी शब्द 'कस्द' (قصد) का अपभ्रंश, 'पक्का इरादा'

चढ़ि जाइ मेरु कुबेर घर
    गढ़ लंक हू में दबि रहै ।
फिर तल रसातल वितल पैठ
    पताल फोरि अमी लहै ॥
भेटै धनंतर से जु वैद
    सु यों अनेक विधैं करै ।
पर काल है जिहिं को जहां
    तिहिं को तहाँ ते नहिं टरै ॥९८॥

गिरि परहि अगिन अपार
    कूदहि जहर कहर दरयाउ[1] में ।
रन जाइ खाइ हलाहलहिं
    परिजाइ केहरि दाउ में ॥
चढ़ि जाइ हिमि गिरि हांकि कै
    लपटाइ आसुर अजब सों ।
ततकाल जो निज काल नाहिं
    तौ बचहि एते गजब सों ॥९९॥

यह तत्वसार विचार मन
    अब झारि समसेरहिं कढ़ौ ।
रिपु सार धार अपार पैरि
    सु रारि करि जग जस मढ़ौ ॥
निज भाग ते रन समय या
    जब कबहुं छत्रिय पावँही ।

१–जहर कहर दरयाउ मैं–जहर के गहरे दरिया में–शब्द 'कहर' अरबी शब्द 'क़ार' (قعر) से बना है, अर्थ गहराई ॥

तिहिं मे जु कादरता करहिं
ते जगत जन्म नसावहीं ॥१००॥
यह धर्म छत्रिन को प्रमान
पुरान बेद सदा कहैं ।
द्विज गऊ पालहिं रिपु उसालहिं
सस्त्र घावहिं तन सहैं ॥
जग जुवा जुद्धहु को कबहूँ
सपनेहु नहिं नाहीं करैं ।
ऐसे परम रजपूत कों
रन गिरत बारंगन बरैं ॥ १०१ ॥
अब रन तजे जो हूजिये
इत अजर अमर जहान में ।
तौ छोड़ि हथियारन धरहिं
कह कढ़त है घमसान में ॥
जग एक दिन मरने मुकर्रर[1]
जनम पाइ सुनीजिये ।
तातें गलिन दर गलिन[2] हूं
जस वृथा मलिन न कीजिये ॥ १०२ ॥
निज आयु रक्षा करत
तनकी आयु मर्म बचावही ।
निज आयु सिंह सपेट तें
सु बचाइ घर कों ल्यावही ॥

१—मुकर्रर—निश्चय करके ॥

२—गलिन दर गलिन—गली गली, सब जगह, सारे संसार में, यह ठेट बुंदेलखंडी बोल चाल है ॥

निज आयु अन्न अमोघ देत
　　यहै विचारत गाजिये ।
परिए न कबहूं दीन अरिहिं
　　न कबहुँ रन तें भाजिये ॥ १०३ ॥
रनधीर छत्रिय को जुरन में
　　दुहू भांतिन है भली ।
जीतै जु अरिगण जाइ तौ ,
　　भोगै धरनि फूली फली ॥
जूझै जु सुद्ध त्रिसुद्ध तौ
　　स्वर्गापवर्गहिं पावहीं ।
तहँ करै मन माने विहार
　　न कबहुँ इहि जग आवहीं ॥ १०४ ॥
ये दो पुरुष जग में जु
　　सूरज को सुमंडल भेदहीं ।
जे जोग जुत आजनम तें
　　नहिं कबहुं ल्यावत खेदहीं ॥
अरु जे हिये हर्षित लरत
　　रन में जु सन्मुख जूझहीं ।
इन के जु गुन गाये सुनें ते
　　परम तत्वहिं बूझहीं ॥ १०५ ॥
कहु कौन चिन्ता है नरन
　　रन में जु तन को परिहरैं ।
जब मरन काशी धाम सम

१—असल प्रति जो हम को मिली थी उसमें यह चरण नहीं लिखा मिला हमने अपनी बुद्धि अनुसार इसकी पूर्ति करदी है ॥

रन मरन कवि जन अनुहरैं ॥
पर तऊ काशी के मरन तें
रन मरन सु विसेष है ।
काहे कि रन मे मरन तें
जस जगजगात अलेष है ॥ १०६ ॥

जिन के परत पग अग्र को
अरि की सु सेना देखतें ।
तिनको सु पग पग पर मिलत
फल अधिक जज्ञ असेष तें ॥
जिनकी जु घाइन ते घुमड़ि
रन रुधिर की धारा गिरैं ।
तिनकी तरैं पैरी[1] पचास
सुवास तें फिर नाहि फिरैं ॥ १०७ ॥

कहँ हैं जु रघु, रावन कहाँ
कहँ राम कहँ हरिचंद हैं ।
कहँ पृथु भगीरथ मानधाता
कहँ करन कुरुनन्द हैं ॥
कहँ पंच पंडव द्रोन दुरजोधन
जयद्रथ कहँ छये ।
इन के जु जुद्ध प्रसिद्ध जस जग
देखियतु है रहि गये ॥ १०८ ॥

पटि जात वापी कूप सर
कटि जात घन बन बाग है ।

१—पैरी—पीढ़ी, पुश्तैं (ठेठ बुंदेलखंडी शब्द है)

ढहि जात धाम रु धौरहर
रहिजात कछु न अदाग है ॥
मिटि जात तन धन एक दिन
पुर नगर हू दहि जात है ॥
पर या जगत में अमर है
जस औ कुजस रहि जात ॥ १०९ ॥
तातें कुजस की गैल में
पग भूल कबहुँ न धारिये ।
यह गैल है बिन मैल जस की
हँसि हथ्यारन झारिये ॥
रजपूत की संपति यहै
पति सदा अपनी राखिये ।
पति गये पतिनी आदरै नहिं
और की कह भाषिये ॥ ११० ॥
यह करि बिचार पमार अर्जुन
सिंह हिय हर्षित भयौ ।
सनमान करि द्विज वरन को
तिन दान गौवन को दयौ ॥
पहिरे गरे गुटिका कवच
रचि भागवत गीतान के ।
करि पान गंगा जल विमल
फिर ठठे ठठ घमसान के ॥ १११ ॥
गुरदा, बगुरदा, छुरी जमधर,
दम तमंचे कटि कसे ।

१–इस चरण की भी हम ने पूर्ति की है ॥

बर बिबिध तीरन सौं भरे
तहँ द्वै तुनीर महा लसे ॥
फिर द्वै कमानैं बाँधि कर
किरवान करि कर में लई ।
बहु बिधि बदूँषनि के जु वृन्दन
की अमित आभा भई ॥ ११२ ॥
छोटे बड़े हथिआर सब
धरि निकट हौदा में लये ।
दल देखि भूप अनूप को
अति प्रबल फल फूलत भये ॥
मुच्छा उमैठत उमड़ि ऐंठत
कठिन कर कुहँचान[1] को ।
हँसि हूलि हाथी लिये साथी
चल्यौ इमि घमसान को ॥ ११३ ॥
तहँ होत पसर पमार की
वे कसर दिग्गज डगि उठे ।
धँसि धँसि धरनि धर के धरैया
कहत जमकातर रुठे ॥
उठि धूरि धारा धरनि तें
नभ धाइ ध्रुव धामै गई ।
इक एक एकन को न देखैं
इमि अँध्यारी छिति छई ॥ ११४ ॥
अति रन अडोल पमार की
वह गोल गोला सी चली ।

१—कुहँचा = हाथ की कलाई, (ठेठ बुन्देलखण्डी भाषा है)

बर बान तीर तुपक्क तोपन
की भई जु घलाघली ॥
दल तहाँ प्रलय पयोधि सो
उमड्यौ अपार रुकै नहीं ।
जिहि के सु कोह भरी कितेकौ
लोक लहरैं ऊमहीं ॥ ११५ ॥

लखि यों अवाई बीर की
रिपु भीर में खलभल भई ।
आयौ पमार पमार आयौ
यहै धुनि छिन इक छई ॥
रन धीर वीर अनूपगिरि
ताकि ताहि हर्षित हिय भयौ ।
करकरे वीरन संग लै
उमड्यौ सु डीलन तहँ तयौ ॥ ११६ ॥

फरके उदंड उमंडि कैं
भुज दंड दोऊ लरन को ।
तहँ फूलि तन तिगुनौ भयौ
बढ़ि चल्यौ जब रन करन को ॥
तिन चित चढ्यौ अति चाउ चौगुन
सौ गुनो साहस भयौ ।
लख गुनो लाल परयौ सु देखत
लोह को लपकत थयौ ॥ ११७ ॥

तहँ अति ललाई उमगि छाई
दृगन माँझ दिखात है ।

जनु वीर रस तन पूरि कर
अखियान ह्वै उफनात है ॥
तन तेज बहु अरु ताउ तीछन
चाउ जिहिं सोभन सनो ।
हिम्मतबहादुर को जु तनु
रन में सु देखत ही बनो ॥ ११८ ॥

तहँ जंत्र मंत्र अनेक
दुर्गा भागवत गीतान के ।
गुटिका गरे विच सोभहीं
जे करत जय घमसान के ॥
कर सैहथी[1] है षग्ग खासे
कठिन कंमर मे लसैं ।
जमधर छुरा सु विलाइती
जिनकों विलोकत जम त्रसैं ॥ ११९ ॥

सर भरे तरकस अरु कमान
महान घोड़े सों लगी ।
तिहिं समय की वह आन सान
दिसा दिसान विषै जगी ॥
तहँ हरषि हर हर हरषि हर हर
हरषि हर हर करि पिल्यौ ।
वह कहनि हर हर की सु धुनि सुनि
जिगर शत्रुन को हिल्यौ ॥ १२० ॥

१—सैहथी=सेह हथ्थी=तीन हाथ लंबी. (सेह फारसी शब्द है अर्थ तीन)

तब मानधाता[1] मरद अति
सुत राइ सबसुखराय को ।
रजधान[2] को धन धनी धीर
सु भक्त नृप के पाइ को ॥
जग भानु काइथकुल कमल को
भोज भिक्षुक करम को ।
सिर मौर वीरन को विदित
सरदार सागर सरम को ॥ १२१ ॥
दिल खोल हरषि हरौल ह्वै
यह बोल भाषत तहँ ठयौ ।
हमरे बिलोकत नृपति कों
इतनो परिश्रम है भयौ ॥
हिम्मत बहादुर ने हमैं
सुत तें अधिक जानो सदाँ ।
इनके नमक तें ईसुरी
हम को करै रन मे अदाँ ॥ १२२ ॥

१—मानधाता=राय सबसुखराय जाति के कायस्थ थे, हिम्मत बहादुर के खजांची थे—मानधाता इन्ही खजांची के लड़के थे, पर बुद्धि विद्या में बडे निपुण थे। इस से लक्षित होता है कि अगले समय में कायस्थ तलवार के धनी भी होते थे केवल कलमही हिलाना नहीं जानते थे ॥

२—रजधान = वर्तमान ज़िला कानपूर का परगना 'सिकन्दरा' और फतेहपूर का परगना 'खजुहा' 'रजधान' की रियासत थी. यह जागीर नव्वाब शुजाउद्दौला ने हिम्मत बहादुर को फौज खर्च के लिये दी थीं, अतएव हिम्मत बहादुर 'रजधान' के राजा भी कहाते थे ॥

हमेरे जियत नृप ओर जो
हथियार अरि को आइ है ।
निज जनक सबसुखराइ को
फिर बदन कौन दिखाइ है ॥

घर में न पैठन पाइवी
अरु बात कहुँ कहिवी कहा ।
मरिये कि अरि को मारिये
अब यह विचार हिये चहा ॥ १२३ ॥

हिम्मत बहादुर ने हमैं
सब साहिवी घर की दई ।
राई सु सबसुख की विदित
इन की बदौलत तें भई ॥

इन की कमाई जनम तें
खाई खवाई और को ।
इनकी कृपान रु कृपा तें
पहुँचे नृपन के तौर को ॥ १२४ ॥

हाथी तुरँग रथ पालकी
परगने इन बकसे सबै ।
रन झारि समसेरैं उमड़ि
इन तें उरिन हूजै अबै ॥

जहँ जहँ नरिंद अनूप गिरि
ने जुद्ध उद्धत हैं करे ।
तहँ तहँ सु सबसुखराय
धाय महीप के आगे लरे ॥ १२५ ॥

अब कै हमारी ओसेरी[1]
निज भाग तें विधि ने दई ।
रनवीर अर्जुन सिंह सों
जो इत लराई जुरि गई ॥
यह कहि मरद अति मानधाता
उमड़ि वर बरछी लई ।
मुख पै ललाई वीरता की
तिहिं समै दूनी भई ॥ १२६ ॥
तन तहाँ फूलतही तुरत
उखरी सु बखतर की करी ।
लखि जंग अंग सिलाह में
न समात देखौ तिहिं घरी ॥
इहि बिधि सु वीरन संग लै
पैठो अलोहि अनी में ।
बहु हाँकि २ हथ्यार घालत
उमड़ि सेना घनी में ॥ १२७ ॥
तहँ प्रथम रन घनघोर भो
अति कठिन वीती है तहां ।
बर वीर अर्जुन मानधाता
समर में जुरि गे जहां ॥
तहँ सालि रहे तन तीर भाला
तुपक अरु वरछीन सों ।
दोऊ तरफ़ के सुभट हाँकत
जुटि गये रिपु सीन सों[2] ॥ १२८ ॥

१—ओसरी—बारी । २—सीने से सीना मिला कर ॥

एकैं जु भाला साधिसुध्य
स क्रुद्ध समसेरैं करैं ।
अति हय कुदाइ चवाइ ओंठ
सु जाइ गज कुंभन परैं ॥
एकैं जु बरछी सली तन तें
खैंचि कै अरि उर धरैं ।
एकैं जु तीखन तीर पैरत
अरिन हैरत मे करैं ॥ १२९ ॥
एकैं न गोलिन को गनत
धसि गोल गोला से गये ।
अरि कट्टि २ विकट्ट चट्ट
सु वट्टि भूतन कों दये ॥
घम घम घमाघम झम झमाझम
धम धमाधम ह्वै ठई ।
चम चम चमाचम तम तमातम
छम छमाछम छिति छई ॥ १३० ॥
मारे हथ्यारन के कितेकौ
वीर रन में विछि गये ।
तिन पै तुरत भट पाउ दै दै
करत जै जै जुटि गये ॥
बर बाँक करत निसांक चुहँकि
सुहाँकि कै हरबरिन सों ।
तहँ घली घोर छुरी बगुरदा
पेसकबजैं अरिन सों ॥ १३१ ॥

२—हैरत—आश्चर्य्य (अरबी शब्द) ३—चट्ट, शीघ्र ॥
४ हरबरिन सों—शीघ्रता से ।

इहि भाँति मरद सुमानधाता
प्रथम निज डौलन लरयौ ।
बरछी खड़ग जमधरन घालि
सु अरि कटक कटा करयौ ॥
फिर ह्वै जुदो जु तुरंग ते
पग रोप प्यादे जुटि गयौ ।
निज ढाल ढक्कन[1] सों कितेकौं
भटन को जु हटा दयौ ॥ १३२ ॥
तहँ हाथ पट्टे के झपट्टि
झपट्टि के झुकि झुकि करे ।
तन स्वामि कारज में समर्पत
स्वर्ग को भे हरबरे ॥
हँसि हाँकि हाँकि हथ्यार
अर्जुन के जु सन्मुख ह्वै सहे ।
निज प्रान छूटे पर समर में
लरे वैसे बहबहे ॥ १३३ ॥
इहि भाँति मरद सुमानधाता
झपटि जूझो समर में ।
चढ़ि कै विमान प्रनाम नृप को
करत गो मिलि अमर में ॥
तब प्रबल वीर पमार अर्जुन
हरषि आगे को बढ़ो ।
तिहिँ निरखि नृप के अंग
अंगनि कोप ओपन सों चढ़ो ॥ १३४ ॥

---

१. ढक्कन सों—धक्कों से ।

तहँ नृपति गंगागिरि[1]
दिलावरजंग जंग विचारि कै ।
आयो सु अग्र उदग्र बरछी
विदित कर उलछारि कै ॥
यह कहत निज वीरन सुनाइ
न काम जकिबे को रहो ।
इक एक बरछी घालि करि
लीजै विजय अति डहडहो ॥ १३५ ॥

याही दिना को नृपति ने
आजनम तें पालो हमैं ।
निज भाग तें दिन मिलो सो
करिये कमी नहि यहि समै ॥
यह कहि तुरंग कुदाइ
आगे उकढ़ि अरि गन में गयौ ।
भुज दंड चंड उदंड करके
फूलि तन तिगुनो भयौ ॥ १३६ ॥

मुख पर ललाई उमगि आई
सिंह सम गरज्यौ जबै ।
अति कर्षि कर्षि हथ्यार घालत
हर्ष जुत हाँकत सबै ॥
तहँ मारि मारि अरिंद
बरछी सो गिराये गयन तें ।

१—गंगागिरि—दिलावरजंग, गंगागिरिजी हिम्मतबहादुर के भतीजे थे, दिलावरजंग इन का खिताब था ।

झुकि झार तरवारन तहाँ
बहु सुभट डाहे हयन तें ॥ १३७ ॥
एकै करे बिन हथ्थ अरि
एकै करे बिन मथ्थ के ।
एकै रिपुन के जुथ्थ जुथ्थ
करे उलथि बिन अथ्थ के ॥
इहि बिधि सँहारे बैरि बर
भुव की लपेटन लपटि कै ।
बहु दाबि डारे समर में
तुर में तुरंगहिं दपटि कै ॥ १३८ ॥
ऐसे घने घमसान में
हय घूमि घाइल ह्वै गयो ।
अरु आपु घाइल ह्वै समर में
उमड़ि हंकत हँसि ठयो ॥
इक ओर भूप जगतबहादुर[1]
हाँकि पैठो अरिन में ।
बरछी उछालत हरष सों
हँसि जाइ घालत करिन में ॥ १३९ ॥
हुड़कार हंकत नहीं संकत
भिरत रन हनुमंत सो ।
अरि ठट्ठ ठेलत खुसी खेलत
समर माझ बसंत सो ॥
बहु ढाल ढक्कन सों ढकेल
अरिंद उसटाये भले ।

१ जगतबहादुर—ये भी हिम्मत बहादुर के भतीजे थे।

बहुमारि समसेरन गिराये
    काटि कर तिनके गले   ॥ १४० ॥

इक ओर हंकत राजगिरि[1] तहँ
    गाज सो ठाढ़ो भलो   ।
अति तेज तुंग तुरंग दाबि
    गुमान गब्बिन को मलो   ॥
सोभित षड़ानन सो तहाँ
    कर सक्ति रक्त भरी लिये   ।
चलि वीर अर्जुन सों जुर्यौ
    मीचहिं चुनौती सी दिये   ॥ १४१ ॥

घालत हथ्यार झपट्टि झुकि झुकि
    रुकत नहिं गज ठेल सों   ।
अरिवर सिलाही बहु गिराए
    सक्ति की जु उठेल सों   ॥
फिर खैंचि निज समसेर फेरत
    सेर सो सपटो तहाँ   ।
तकि तीर घालत गरजि कै
    वर वीर अर्जुन है जहाँ   ॥ १४२ ॥

तहँ जुरि गई बहु अरिन सों
    लखियतु लराई लोह की   ।
अति होत हंक हकाहकी रन
    राजगिरि सों कोह की   ॥

---

१ राजगिर—ये भी हिम्मतबहादुर के भतीजे थे।

झारी तहाँ तरवार नृप
उमराउँगिरिनंदन बली ।
उमड़ात भूतल प्रति भटन तें
रुधिर की धारा चली ॥ १४३ ॥
ऐसे घने घमसान में
तकि वीर अर्जुन ताउ सों ।
मारे महासुर राजगिरि के
अंग अंगन चाउ सों ॥
अरु और अरि बीरन तहाँ
समसेर बरछी बहु हनी ।
तेऊ कुँवर ने फूल सी तन में
लगत कछु नहि गनी ॥ १४४ ॥
ज्यौं ज्यौं लगैं हथियार तन
त्यौं चढ़त चौगुन चाउ है ।
हाँकत हँसत समसेर झारत
करत अरि सिर घाउ है ॥
ऐसे घने घमसान मे हय
घूमि घाइल ह्वै गिरयौ ।
तहँ राजगिरि पग रोपि कै
सौ गुन पयादे ह्वै भिरयौ ॥ १४५ ॥
इक ओर उत्तमगिरि कुँवर
नरसिंह सौ गर्जत भयौ ।

---

१ उमरावगिरिनन्दन—अर्थात् राजगिरि; क्योंकि उमरावगिर हिम्मतबहादुर के जेठे भाई थे।

२ उत्तमगिर—ये भी हिम्मतबहादुर के भतीजे थे।

उलछार बरछी हय कुदाइ
पमार के दल बिच गयौ ॥
फरके उदंड प्रचंड अतिभुज-
दंड भैरव रारि में ।
दृग लाल दोऊ मुख बिसाल
कराल करि रिपु धारि में ॥ १४६ ॥
अध अधर चब्बत नहीं दब्बत
फूलि फब्बत समर में ।
कौंचन उमैठत हरषि पैठत
लोह की भर भ्रमर में ॥
तहँ घालि बरछी घोर बहु
अरि गन गिराये गजन तें ।
मानौ गिरे कंचन कलस
अर्जुन अजिर के छजन तें ॥ १४७ ॥
तहँ कढ़ी कम्मर ते तुरत
समसेर दामिन सी दिपै ।
जिहिं के परत रन अग्र में
सु उदग्र अरि को नहिं खिपै ॥
झुकि झार उत्तमगिरि कुमार
तहां करी तरवारि है ।
बिन मुंड के बहु करे अरि
तिर्पित कियौ त्रिपुरारि है ॥ १४८ ॥
तहँ इकनकी गिरवान[1] गहि
पटके हयन तें समर में ।

---

[1] गिरवान—फारसी शब्द 'गेरवान' से बना है—सवार लोग इसे गरदन की रक्षा के लिये पहनते हैं।

गहि हथ्थ एकन को गिराये
मारि जमधर कमर में ॥
तहँ हने एकन को जु मुठिका
हनी एकन चनकटै[1] ।
भजि चले एकैं देखि क्रुद्धित
कुँवर को इत उत उटै ॥ १४९ ॥

इमि लर्यौ उत्तमगिरि कुमार
विडारि वैरिन को दियौ ।
तहँ वीर अर्जुन के जु सन्मुख
होइ जुद्ध महा कियौ ॥
तित निरखि प्रबल पमार नै
मारे महा सर तकि कै ।
तब ताकि याको ताउ तिगुनो
रहि गयौ छिन जक्कि कै ॥ १५० ॥

घन घाउ लागे पर कुँवर
तहँ लर्यो प्रबल पमार सों ।
झुकि झार समसेरैं उमडि
नहिं टर्यौ अरि की मार सों ॥
तब जुलफिकार नवाब धायौ
धनि धनी मेवात को ।
तरवारि झारत अरि विदारत
तजहिं रच्चन गात को ॥ १५१ ॥

---

१ चनकटैं—थप्पड़ ।

तिहिं विविध भाँतिन के तहाँ
हथियार घाले अरिन पै ।
सफजंग तुंग तुरंग दावत
जुरयौ जाकर करिन पै ॥
तहँ मारि तरवारन पमारन
टूक टूक कियौ भलो ।
सब धन्य धन्य कहैं तबै
जब स्वर्ग कों हरषत चलो ॥ १५२ ॥
इहि भाँति जूझो जुलफिकार
नवाब सुभ संग्राम में ।
तन स्वामि कारज में समर्पित
करि गयौ सुरधाम में ॥
तहँ सुभट संगर कंसराज
सपूत पूत पुकारि कै ।
उमराउ सिंह नृसिंह सो
पैठो सुवीर विदारिकै ॥ १५३ ॥
घन घाइ करि वरछीन के
अरि छीन करि डारे सबै ।
उदूभट पमारन कों विलोड़त
गरजि बोलत नहि दबै ॥
तहँ सेर सो वांको लिये
समसेर सूरन में करै ।
उमराउसिंह उराउ[1] करि
अरि झुंड मुंडन कों हरै ॥ १५४ ॥

---

१ उराउ = उत्साह (अन्तरवेदीभाषा)

इहि बिधि लर्यौ जिय छोड़ि कै
तन ओड़ि अस्त्र अरीन के ।
हँसि हर्षि हर्षि हकाहकी
काटे भसुंड करीन के ॥
तहँ जुटे उद्भट बिकट भट
तिन सों लड़ाई बहु करी ।
घन घोर घाइन की घुमाड़ि
सब देह लोहू सों भरी ॥ १५५ ॥

तहँ धाइ सौंहे घाइ खायइ
गिर्यौ गरजि रन रंग में ।
उमड़ै रुधिर के मिस मनौ वर
वीर रस अँग अँग में ॥
इत रुंड रारि करै महा
उत मुंड हर के हार में ।
तित वर्यौ सुर नारिन निरषि
लैगईं स्वर्ग विहार में ॥ १५६ ॥

नृप नवलसिंह पमार वीर
भिर्यौ गुलौली को धनी ।
हँसि हरषि हथिगारन करत
अति लरत काटत अरि अनी ॥
अति तेज तुंग तुरंग दावि
दवाइ दीन्हे रिपु झला ।
भाई बिरादर संग लै
कीन्हौ सु अर्जुन पै हला ॥ १५७ ॥

तहँ सिंह सो जु नरिंदसिंह
पमार झपटौ झमकि कै ।
निज हय कुदाइ दबाइ रिपु
हथियार घालत बमकि कै ॥
जग जगत जगमग जगतसिंह
पमार रार करीभली ।
हलकार बर बरछीन सों भट
सेन अर्जुन की दली ॥ १५८ ॥
समसेर झुकि झारी झमकि
तन तमकि ताउ करै महां ।
अति बमकि बीरन के सुरुट्टि
कबंध उट्ठत हैं जहां ॥
रन बुद्धसिंह सपूत सेंगर
लरयो हर्षि हकाहकी ।
तहँ मारि हथियारन अरिन
की करिदई जु थकाथकी ॥ १५९ ॥
अति भिरयो कुँवर सरूपगिरि[1]
अर्जुन विकट बलवान सों ।
असि खैंचि घाइल किये बहुतक
बहुत मारे जान सों ॥

१—सरूपगिरि=हिम्मतबहादुर के भतीज—इनका असल नाम सुन्दर गिरि था ।

२—यह चरण असली प्रति में नहीं लिखा था । हमने अपनी ओर से इसकी पूर्ति कर दी है ।

अति मुदित मन मैदान में
नहिं मुरयो सत्रु सपेट सों ।
बहु दावि डारे सुभट अरि
निज तुरँग दीह दपेट सों ॥ १६० ॥

अति बल प्रबल पड़िहार बीर
निधानसिंह महा बली ।
निज सुभट बीरन संगलै
सुदमानकैं घालीं भली ॥
ढाहे गयंदन के सवार
बड़े बड़े सरदार हैं ।
फिरि झपटि समसेरैं करीं
नाहिं रारि मानत हार हैं ॥ १६१ ॥

तहँ भिरे स्वासा के धनी
जु बुंदेल विदित जहाँन में ।
सु दिमान दूलहजू दिमान
खुमान सिंह मुसान में ॥

१—दमानक—एक प्रकार की छोटी तोप जो घोड़े पर लदी रहती है और लदे लदे ही घाली जाती है।

२—स्वासा—कुल पहाड़ के निकट एक गांव है। दीवान दूलह सिंह जी बुंदेला इस गांव के जागीरदार थे। यह जागीर रियासत चरखारी की ओर से थी। हिम्मतबहादुर की ओर से जितने क्षत्री वीर लड़ते हुए इस पुस्तक में लिखे हैं वे सब विजयबहादर महाराणा चरखारी के नौकर वा जागीरदार थे।

घाली विदित बरछी बहुत
समसेर झारी झपकि कै ।
तहँ कटा अर्जुन सेन को
तिन करयौ लोहे लपकि कै ॥ १६२ ॥

तहँ इकन हाँकत हरष सों
अरु इकन मारत खग्ग है ।
तित इकन डारत हयन तें
इमि जग्यौ उमड़ि उदग्ग है ॥
लाला तहाँ हँसि हरषि
हीरालाल लाल परयौ भलो ।
वर बीर अर्जुनसिंह को
दल लखत नृप के दलमलो ॥ १६३ ॥

तहँ हरषि हिन्दूपति पमार
सम्हार वर बरछी लिये ।
धायो तुरंगहि दपटि कै
झुकि झपट कोप महा किये ॥
हिय सुमिरि पूरब वैर
अर्जुन सिंह के सनमुख भयो ।
काका भतीजे को तहाँ अति
जुद्ध तीखन जुरि गयो ॥ १६४ ॥

तहँ देखि हिन्दूपतिहि
अर्जुनसिंह बोलो गज्जि कै ।
यह बचन नहि पावै कुँवर
इत भलो आयो सज्जि कै ॥

यह सुनत अर्जुन को बचन
तहँ वीर हिन्दूपति बली ।
घाली उमगि उलक्षार वरछी
सुद्ध नागिन सी चली ॥ १६५ ॥
तहँ फोरि हौदा के विकट
पटिया तुरत पारहिं भई ।
लषि जियत अर्जुन सिंह को
असि खैंच कंमर ते लई ॥
तित लग्यौ झारन झपटि कै
समसेर सर समान ह्वै ।
तिहिं समय अर्जुन वीर ने
मारे वदन में बान द्वै ॥ १६६ ॥
तहँ लगत तीरन के तुरँग
चढि चाउ चौगुन चित भयो ।
तन फूलि फरके फबो अति
बर वीरता को छबि छयो ॥
तब तानि तानि कमान अर्जुन
तीर मरमन[1] में हने ।
ते लगत हिन्दूपति पमार
जुझार ने तिन सम गने ॥ १६७ ॥
तहँ और अर्जुन के सुभट
धाए कुँवर पै कोपि कै ।
तिन सो लरयो तरवार बरछिन
हिंदुपति पग रोपि कै ॥

१—मरमन=मर्मस्थानों में, अर्थात् शरीर के ऐसे नाजुक अंग जहां तनिक भी चोट लगने से मनुष्य शीघ्र ही मरता है ।

इहि समय हिन्दूपति कुँवर को
　　कुँवर कोप महा कियो　।
रन में बहादुरसिंह बढ़ि
　　नरसिंह सो उमगत हियो　॥ १६८ ॥

आयो उमड़ि उलछार नेजा
　　घाउ मारत अरिन को　।
सु हलाइ डारत हयन तें भट
　　हँसि बिदारत करिन को　॥
अति मार मार्ची रार बिच
　　नहि हार कोऊ मानहीं　।
झट पट झपट्टि भिरे तहाँ
　　वर वीरताई आनहीं　॥ १६९ ॥

इमि भर लराई में बहादुरसिंह
　　तन घाइल भयो　।
तब बीर अर्जुन सिंह ने
　　गज हूलि आगे को दयो　॥
इहि समै भट सिरमौर गौर
　　दिलीपसिंह उमाह सों　।
धायो हरषि हँसि हूलि हाथी
　　लिये साथी चाह सों　॥ १७० ॥

इक ओर गौर निवाजसिंह
　　दराज रन उमड़ो भलो　।
इक ओर दुरजनसिंह गौर
　　सुदौरि अरि सन्मुख चलो　॥

तहँ चली अति तरवार झार
पमार गौरन सों तहाँ ।
रन रुंड मुंड भसुंड कटि
कटि फैल फरकत हैं जहाँ ॥ १७१ ॥

दल दौरि उत्तमसिंह गौर
गरज्जि किरवानैं करी ।
मुच्छा उमैठत हरषि पैठत
शत्रु की सेना हरी ॥

तहँ दल दबाइ दिलीपसिंह
सु हंक हाथी हूलि कै ।
जुरि जुटि गयो अर्जुन बली के
दुरद सों फर फूल कै ॥ १७२ ॥

तहँ घले हौदन पर हथ्यार
पमार अरु इत गौर के ।
डगि उठे दिग्गज जुद्ध देखि
दुहूं सुभट सिरमौर के ॥

इहि समै दोऊ दलन घमकत
घल्यो अति हथियार है ।
हिम्मतबहादुर इहि समै
आयो तुरंग उलछार है ॥ १७३ ॥

हाँकत अरिंदन को दपटि
अति विकट वर बरछी लिये ।
निज बांह भरि सु उछाह सों
जिन हनन ते फिर नहिं जिये ॥

इहि भांति अर्जुन के सुभट
रन टाहि बरछी सों दिये ।
जे भये सन्मुख नृपति के
तिन को सु बिन प्रानन किये ॥ १७४ ॥

मन तें जु आगे तन भयो
तन तें जु आगे घोड़ है ।
मन तन तुरंग सु तेज की
मचि रही होड़ा होड़ है ॥
तहँ हय कन्हैया[1] की फुरत
रन जुरत देखत ही बनी ।
हिम्मत बहादुर चढ़्यौ जिहिं पै
हनत शत्रुन की अनी ॥ १७५ ॥
तहँ हय कन्हैया कूदि कै
गज की कन्हैया[2] पर पर्‌यौ ।
तब घली छूटा नृपति की
बरछी सु भो अति भरभर्‌यौ ॥
गज कुंभ फोरि महावती
तन फोरि हौदा फोरि कै ।
कढ़ि गई बाहर घोर शक्ति
सुरक्त में तन बोरि कै ॥ १७६ ॥
तहँ गिर्‌यौ महत महावती
रन भूमि बिच घन घूमि कै ।

१ कन्हैया=हिम्मत बहादुर के घोड़े का नाम था ।
२ कन्हैया=कंधा, मस्तक ।

गज अजब[1] अर्जुनसिंह को
    झपटै झुकै फुकि झूमि कै ॥
रनवीर प्रबल पमार तबहीं
    कूदि हौदा तें पर्‌यौ ।
कुंजर किलाए* आइ करि तन
    तमकि तरवारन लर्‌यौ ॥ १७७ ॥
हिम्मत बहादुर भूप की
    इत कढी सुभ समसेर है ।
गज सुंड दंडन पै परत रन
    करत रिपु गन ढेर है ॥
तहँ सुभट अर्जुन बीर के
    जुरि भूप के सम्मुख गये ।
तिनके सिरन पै अति उदग्ग
    सुखग्ग नृप घालत भये ॥ १७८ ॥
सिर कटहिं सिर कटि धर कटहिं
    धर कटि सु हय कट जात हैं ।
इमि एक एकहिं वार में
    कटि भट भंग विन गात हैं ॥
इत सुभट भूप अनूप गिरि के
    उकढि आये ताउ सों ।
उत सुभट अर्जुन के विकट
    फिरि लरि परे अति चाउ सों ॥ १७९ ॥

---

१ गज अजब=अजबगज—अर्जुनसिंह के हाथी का नाम ।

* किलाए=हाथी की गर्दन में जो एक रस्सी सी पड़ी रहती है और जिसमें पैर फँसाकर महावत बैठता है उसे 'किलाया' कहते हैं । किलाये पर आना=महावत की जगह बैठना ।

छप्पय ।

जुद्धहि सुभट त्रिशुद्ध शुद्ध
 अति उद्धत क्रुद्धहिं ।
बुद्धहिं निज निज बयर
 द्वरि कर खल दल रुद्धहिं ॥
हंकहिं हँसहि हुमंकि हेरि
 हरषहिं नहिं संकहिं ।
झंकहिं झुकि २ झपटि
 लपटि लर बमकि बमंकहिं ॥
तहँ पद्माकर कवि वरन
 इमि तमकि ताउ दुहु दल भयव ।
नृप मनि अनूप गिरि भूप जब
 करत षग्ग रन जस वयव ॥ १८० ॥

हरि गीतिका ।

करि खग्ग जग्गि उदग्ग अति
 अरि वग्ग आए उमड़ि कै ।
गज घटनि माहिं महाबली
 घालत हथ्यारनि घुमड़ि कै ॥
पृथुरित्ति नित्त सुवित्त दै
 जग जित्ति कित्ति अनूप की ।
बर बरनियै विरुदावली
 हिम्मत बहादुर भूप की ॥ १८१ ॥

छंद त्रिभंगी।

तहँ दुहुँ दल उमड़े घन सम घुमड़े
झुकि २ झुमड़े जोर भरे ।
ताकि तबल तमंके हिम्मत हंके
बीर बमंके रन उभरे ॥
बोलत रन करखा बाढ़त हरखा
बानन बरषा होन लगी ।
उलछारत सेलैं अरिगन ठेलैं
सीनन पेलैं रारि जगी ॥ १८२ ॥
बन्दी जन बुल्लै रोसन खुल्लै
डग डग डुल्लै कादर हैं ।
धौंसा धुनि गज्जै दुहुँदिसि बज्जै
सुनि धुनि लज्जै बादर हैं ॥
नीसान सु फहरैं इत उत छहरैं
पावक लहरैं सी लगतीं ।
छुवतीं नकि नाका मनहु सलाका
धुजा पताका नभ जगतीं ॥ १८३ ॥
कढ़ि कोटन वारे बीर हँकारे
न्यारे न्यारे अभिर परे ।
किरवानन झारैं सुभट बिदारैं
नेकु न हारैं रोस भरे ॥
कानन लौं तानैं गहि कंमानैं
अरिन निसानैं सिर घालैं ।
सूधे अति पैठैं मुच्छन ऐंठैं
भुजन उमैठैं गहि ढालैं ॥ १८४ ॥

अग्रनि की मूकैं[1] घालि न चूकैं
दैदै कूकैं कूदि परे ।
गहि गरदन पटकैं नेकुं न भटकैं
झुकि २ झटकै उँमग भरे ॥
रन करत अहंगे सुभट उमंगे
बैरिन बंगे करि झपटैं ।
सीसन की टक्कर लेत उटक्कर
घालत छक्कर लरि लपटैं ॥ १८५ ॥
तहँ हथ्था हथ्थी मथ्था मथ्थी
लथ्था पथ्थी माचि रही ।
काटैं कर कट कट विकट सुभट भट
कासो खटपट जातकही ॥
गहि कठिन कटारी पेलत न्यारी
रुधिर पनारी वमकि वहैं ।
खंजर खिन खनकैं ठेलत ठनकै
तन सनि मन कैं हिलगि रहैं ॥ १८६ ॥
गहि २ पिसकब्जैं मरमन गब्जैं[2]
तकि तकि नब्जैं[3] काटत हैं ।
कंमर ते छूरे काटत पूरे
रिपु तन रूरे काटत हैं ॥
करि धक्का धक्की हक्का हक्की
ठक्का ठक्की मुदित मची ।
घन घोर घुमंडी रारि उमंडी
किलकत चंडी निरखि नची ॥ १८७ ॥

---

१ मूकैं—तरफ, ओर, दिशि। २ गब्जै=हूल देना, घुसेड़ देना।
३ नब्जैं=(अरबी शब्द) नसें।

एकैं गहि भाले करि मुख लाले
सुभट उताले घालत हैं ।
तोरत रिपु ताले¹ आले आले
रुधिर पनाले चालत हैं ॥
झारत असि जुरि जे वीरन
उरजे पुरजे २ काटि करैं ।
हथियारन सूटैं नेकु न छूटैं
खल दल कूटैं लपटि लरैं ॥ १८८ ॥
तहँ ढुका ढुकी मुका मुकी
डुका डुकी होन लगी ।
रन इका इकी झिका झिकी
फिका फिकी जोर जगी ॥
काटत *चिलता हैं इमि असि बाहैं
तिनहिं सराहैं वीर बड़े ।
टूटैं कटि झिलमैं+ रिपु रन बिलमैं
सोचत दिल में खड़े खड़े ॥ १८९ ॥
ढालन के ढक्के लागत पक्के
इत उत थक्के थरकत हैं ।
इक इक्कन टक्के बँधे झमक्के
तननि तमक्के तरकत हैं ॥

---

१ ताले=सीने पर भाले का घाव न लगे इसलिये एक विशेष आकार का लोहे का तवा सीने पर पहना जाता है उस का नाम 'ताला' है।

* चिलता=एक प्रकार का कवच। यह केवल गुजराती तलवार से कटता है।

+ झिलम=एक प्रकार का कवच।

ललकत फिर लपटे छत्तिन चपटे
करि अरि चपटे पेरत हैं ।
भट भुजन उखारत छिति पर डारत
हँसि हुड़कारत हेरत हैं ॥ १९० ॥
ठोकत भुज दंडन उमड़ि उदंडन
प्रबल प्रचंडन चाउ भरे ।
करि खल दल खंडन बैरि विहंडन
नौऊ खंडन सुजस करे ॥
दस्ताने करि करि धीरज धरि धरि
जुद्ध उभरि भरि हंकत हैं ।
पैठत ×दुरदन में रोषित रन में
नेकु न मन में संकत हैं ॥ १९१ ॥
निकसी तहँ खग्गैं उमड़ि उमग्गैं
जगमग जग्गैं दुहु दल में ।
भाँतिन भाँतिन की बहु जातिन की
अरि पांतिन की करि कलमें ॥
तहँ कढ़ीं *मगरबी अरिगन चरबी
चापट ꣻकरबी सी काटैं ।
जगि जोर *जुनब्बैं फहरत फब्बैं
सुंडन गब्बैं फर पाटैं ॥ १९२ ॥
विज्जुल सी चमकैं घाइन घमकैं
तीखन तमकैं *बंदर कीं ।

× दुरद—दो दांतवाला अर्थात् हाथी । * मगरबी, जुनब्बी, बंदरी, सूरती, लीलम लहरदार, लालूवार, ये सब तरवारों की विशेष जातियों के नाम हैं । ꣻ करबी=जुवार का पौधा ।

*चंद्री सु खग्गैं जगमग जग्गैं
लपकत लग्गैं नहिं वरकी ॥
सोहैं सुभ *सुरती घलत न मुरती
रन में फुरती वीरन कों ।
*लीलम तरवारैं झुकि झुकि झारैं
तकि तकि मारैं धीरन कों ॥ १९३ ॥
गजकुंभ विदारैं सु * लहरदारैं
लहरनि धारैं बिधि बिधि की ।
लखि *लालूवारैं रिपुगन हारैं
मोल विचारैं नैव निधि की ॥
तहँ +घुरो सानी जग की जानी
घलैं कृपानी चखचौंधैं ।
+निव्वाजहु खानी +दलनिधि खानी
विज्जु समानी रन कौंधैं ॥ १९४ ॥
असि वर+नादौटैं घलत न लौटैं
मुंडन मोटैं काटि करैं ।
वर,+मानासाही भटन दुवाहीं
झिलमनि थाहीं नहीं भरैं ॥
सुभ समर +सिरोही जग मग जोही
निकसत सोही नागिन सी ।
कर करी सुकती+ तीखन तती
हनि रिपु छत्ती नहि विनसी ॥ १९५ ॥

---

* तरवारों के नाम ।

+ खुरासानी, निवाजखानी, दलनिधिखानी (वा दलेलखानी) नादौट, मानासाहीं (मन्नासाही) सिरोही, कत्ती—ये तरवारों की विशेष जातियों के नाम हैं।

गंजत गज दुरदा सहित *बगुरदा
　　गालिब *गुरदा देखि परे　　।
†तुरकन के तेगा †तोरन तेगा
　　सकल सुबेगा रुधिर भरे　　॥
जग जगी +जिहाजी मंजुल माजी
　　सूरन साजी सोभि रहीं　　।
दिपती +दरियांई दोनौ धाई
　　भटनि चलाई अति उमहीं　　॥ १९६ ॥
तहँ सु +अलेमानी अवर न सानी
　　सहित निसानी घलन लगीं　　।
सु +जुनेदहु खानी पूरित पानी
　　दिपति दिखानी जगा जगी　　॥
दोनौ दिसि निसरी लषत न बिसरी
　　मंजुल +मिसरी तरवारैं　　।
तन तोरन रुपती गालिब +गुपती
　　झक झक झुपती झुकि झारैं　　॥ १९७ ॥
हेरी जु +हलब्बी मुंडन गब्बी
　　सीस हलब्बी सी चमकैं　　।
तहँ करत झपट्टे बीर सुभट्टे
　　चहुं दिसि +पट्टे घम घमकैं　　॥

---

* गुरदा, बगुरदा = बिशेष प्रकार के हथियार हैं ।

† तुर्की तेगा, तोडन साही तेगा = बिशेष प्रकार के तेगा हैं ।

\+ जहाजी, दरियाई, अलेमानी, जुनेदखानी, मिसरी, गुपती, हलब्बी, पटा = ये भी बिशेष प्रकार की तलवारें हैं ।

घालत अति चांड़े गहि गहि गाड़े
रिपु सिर भांड़े से जु हरैं ।
करि करि चित चोपैं रन पग रोपैं
धरि धरि धोपैं धूम करैं ॥ १९८ ॥

जिन ने अति भारे बखतर फारे
दलनि दुधारे बहु निकसे ।
तहँ सु *बरदमानी खड़ग *पिहानी
हर वरदानी हेरि हंसे ॥
चरबी जिन चाबी दबहिं न दाबी
दिपति *दुतावी देखि परैं ।
मुरि मुरत कहूं ना उत्तम +ऊना
सब तें दूना काट करैं ॥ १९९ ॥
छीलत जे कांचै रन में नाचैं
सुदम *तमाचैं ओप धरैं ।
रंजित रन भूमी सु षड़ग *रूमी
रिपु सिर तूमी सी कतरैं ॥
असिवर *अँगरेजैं घलि घलि तेजैं
अरि गन भेजैं सुरपुर को ।
लखि *फरुकसाही बीरन बाही
खल भजि जाहीं दुर दुर को ॥ २०० ॥

---

* बरदवानी (वर्दवानी) पिहानी, दुतावी, तमाचैं, रूमी, अंगरेजी, फर्रुखसाही, तकब्बरी और अकब्बरी तलवारों की विशेष जातियों के नाम हैं।

+ ऊना = एक विशेष प्रकार की छोटी तलवार है जिसे सरदार लोग अपने तकिए में रखते थे।

रिपु झलन झकोरैं मुख नहि मोरैं
बखतर तोरैं *तकब्बरी ।
× इक एकन मारैं धरि ललकारैं
गहि तरवारैं *अकब्बरी ॥
इमि बहु तरवारैं काढ़ि अगारैं
सुचित विचारैं नहि आवैं ।
तिन के बहु खनके झिलमन झनके
ठनकत ठनके तन तावैं ॥ २०१ ॥

*बकचकैं चलावैं दुहु दिसि धावैं
हयन कुदावैं फूल भरे ।
गजदंत उपाटैं हौदा काटैं
बांधि सपाटैं अति उभरे ॥
हथ्थिन सों हथ्थी मथ्था मथ्थी
रारि अकथ्थी करन लगे ।
जंजीरन घालैं सुंड उछालैं
बांधत फालैं फर उमगे ॥ २०२ ॥

गहि गहि हय झटकैं दिसि दिसि फटकैं
भूपर पटकैं नहिं लटकैं ।
पाइन सों पीसैं अरिगन मीसैं
जम से दीसैं नहि भटकैं ॥

× इस चरण की हमने अपनी ओर से पूर्ति की है। असली प्रति में यह नहीं था।

* बकचकैं = बक्र चक्र—एक प्रकार का हथियार है।

प्रति गजनि उठेलैं दंतन ठेलैं
    है भट भेलैं जोर करैं ।
जुथ्थन सों जूटैं नेकु न छूटैं
    फिर फिर छूटैं फेर लरैं ॥ २०३ ॥

करि करि इम टक्कर हटत न थक्कर
    तन तकि तक्कर तोरत हैं ।
मारे रन गुंडन भाले झुंडन
    तऊ न सुंडन मोरत हैं ॥
इमि कुंजर लपटैं दुहु दल दपटैं
    झुकि झुकि झपटैं झूमत हैं ।
अरि पटल पटा से फारत खासे
    सु घनघटा से घूमत हैं ॥ २०४ ॥
तहँ अर्जुन बंका करि करि हंका
    दुरद निसंका हूलत हैं ।
बैठो जु किलाएं, मुच्छन ताएं
    रन छवि छाएं फूलत हैं ॥
झारत हथियारन मारत वारन
    तन तरवारन लगत हँसैं ।
पैरत भालन को सरजालन को
    असि घालन को धमकि धसैं ॥ २०५ ॥

तहँ मची हकाहक भई जकाजक
    छिनक थकाथक होइ रही ।
तब नृप अनूप गिरि सुभट सिंधु तिरि
    अर्जुन सों भिरि खड़ग गही ॥

हय दाधि कन्हैया सुमिरि कँधैया
सु गज कँधैया पर पहुँचो ।
झारत तरवारै ताकि ताकि मारै
प्रवल पमारै गहि कहुँचो ॥ २०६ ॥
पटक्यो गज परतें उमड़ि उभरतें
अरि सिर धरतें काटि लियो ।
रिपु रुंड धरा को अरपत ताको
हरहिं हरा को मुंड दियो ॥
लहि अर्जुन मथ्था गिरिजा नथ्था
अमित अकथ्था नचत भयो ।
डम डमरू बजावै बिरदनि गावै
भूत नचावै छबिन छयो ॥ २०७ ॥
किल किलकत चंडी लहि निज *खंडी
उमड़ि उमंडी हरषति है ।
सँग लै बैतालनि दै दै तालनि
मज्जा जालनि करषति है ॥
जुग्गिनानि जमातीं हिय हरषातीं
षद षद खातीं मासन को ।
रुधिरन सों भरि भरि खप्पर धरि धरि
नचतीं करि करि हासन को ॥ २०८ ॥
बज्जत उग्र डंका गज्जत बंका
भज्जत लंका लों अरिगे ।
मन मानि अतंका करि सत संका
सिंधु सपंका तरि तरिगे ॥

* खंडी = हिस्सा ।

नृप करि इमि रारनि लरि तरवारनि
मारि पमारनि फते लई
लूटे बहु हय गय देन खलनि भय
जग में जय जय सुधुनि भई ॥ २०९ ॥

छप्पै ।

जय जय जय धुनि धन्य धन्य
गज्जिय छिति छज्जिय ।
फहरत सुजस निसान सान
जय दुंदुभि बज्जिय ॥
सोभहिं सुभट सपूत स्वाइ
तन घाइ अतुल्ले ।
बिमल वसंतहि पाइ मनहु
कल किंसुक फुल्ले ॥ २१० ॥
तहँ पदमाकर कवि बरनि
इमि रन उमंग सफजंग किय ।
नृप मनि अनूप गिरि भूप जहँ
सुख समूह *सुफतूह लिय ॥ २११ ॥
सुभ सुख समूह फतूह लिय
हिय मंजु मोदन सों भरै ।
काली कपाली निसदिना
नित नृपति की रच्छा करै ॥
पृथुरित्त नित्त सुवित्त दै जग
जित्ति कित्ति अनूप की ।
वर बरनिये विरदावली
हिम्मतबहादुर भूप की ॥ २१२ ॥
इति कवि पदमाकर विरचितायां नृप हिम्मत
बहादुरस्य विरदावल्यां समाप्तं शुभम् ।

* फतूह = फतेह, विजय ।